तानसेन समारोह

विश्व संगीत समागम

2 0 1 8

विश्व संगीत समागम

तानसेन समारोह

25 दिसम्बर
प्रातः 10 बजे
हरिकथा एवं मीलाद
मजीद खाँ एवं साथी - शहनाई

शुभारम्भ
तानसेन समारोह सायं 7 बजे
अलंकरण
राष्ट्रीय तानसेन सम्मान
सुश्री मंजू मेहता-सितार
2018-19
राजा मानसिंह तोमर राष्ट्रीय सम्मान
संकट मोचन प्रतिष्ठान, वाराणसी
2017-18
नटरंग प्रतिष्ठान, नयी दिल्ली
2018-19

25 दिसम्बर, 2018 प्रथम सभा (सायं)
शासकीय माधव संगीत महाविद्यालय-ध्रुपद गायन
मंजू मेहता-सितार (सम्मानित)
ऋत्विक सान्याल-ध्रुपद गायन
रीतेश रजनीश मिश्र-गायन

25 से 29 दिसम्बर, 2018
तानसेन समाधि परिसर, हजीरा, ग्वालियर
प्रातः कालीन सभाएँ10 बजे से
सायंकालीन सभाएँ 7 बजे से

24 दिसम्बर, 2018 सायं 7 बजे
तानसेन समारोह की पूर्व संध्या पर
पूर्व रंग
॥ गमक ॥
सूफियाना संगीत
इन्टक मैदान, हजीरा, ग्वालियर में

26 दिसम्बर, 2018 द्वितीय सभा (प्रातः)
शंकर गांधर्व संगीत महाविद्यालय-ध्रुपद गायन
राखलेश बघेल-ध्रुपद गायन
विपुल कुमार राय-संतूर
निर्भय सक्सेना-गायन
दीपक क्षीरसागर-मोहनवीणा
26 दिसम्बर, 2018 तृतीय सभा (सायं)
राजा मानसिंह तोमर संगीत एवं
कला विश्वविद्यालय-ध्रुपद गायन
उस्ताद बेहदाद बाबई,
अर्देशिर कामकार, ईरान- सहतार,
ख़मांचे-जुगलबंदी (विश्व संगीत)
वैशाली देशमुख-गायन
फारूख लतीफ खाँ-सारंगी
रुचिरा केदार-गायन
27 दिसम्बर, 2018 चौथी सभा (प्रातः)
तानसेन संगीत महाविद्यालय-ध्रुपद गायन
कैलाश पवार-ध्रुपद गायन
संतोष नाहर-वायोलिन
मधुमिता नकवी-गायन
सारंग सैफ़ीज़ादे, निलोफ़र मोहसनीन,
निगाह जोहदीमुताल्पिपुर,
नाज़नीन ग़नीजादे, ईरान-गायन,
टुम्बक,संतूर, ख़मांचे (विश्व संगीत)
27 दिसम्बर, 2018 पाँचवी सभा (सायं)
भारतीय संगीत महाविद्यालय-ध्रुपद गायन
अर्सेन पेट्रोजियान, शॉक गैस्प्रियान,
एविटिस केयोसियान,
आर्मीनिया- सोलो डुडुक,
डम डुडुक, ढोल (विश्व संगीत)
मोवना रामचन्द्र-गायन
कमला शंकर-गिटार
राम देशपाण्डे-गायन

28 दिसम्बर, 2018 छठी (प्रातः)
सारदा नाथ मंदिर संगीत महाविद्यालय-ध्रुपद गायन
गौतम काले-गायन
सौरवव्रत चक्रवर्ती-सुरबहार
ज्योति फगरे अय्यर-गायन
उस्ताद निसार हुसैन खाँ एवं द्यानेश्वर देशमुख
तबला, पखावज - जुगलबंदी

28 दिसम्बर, 2018 सप्तमी सभा (सायं)
ध्रुपद केन्द्र, ग्वालियर-ध्रुपद गायन
निल्गाम अक्सॉय, माल्टे स्ट्विक, जॉनेस क्रिस्टैन
बेनजामिन स्ट्विक, जर्मनी-गायन
फ्रेम इम, ल्यूट,(विश्व संगीत)
कशिश मित्तल-गायन
उस्ताद निशात खाँ-सितार
अजय प्रसन्ना-बाँसुरी

29 दिसम्बर, 2018 अष्टमी सभा-बेहट (प्रातः)
तानसेन स्मारक केन्द्र, बेहट, ध्रुपद गायन
महारूद्र मंडल संगीत महाविद्यालय-ध्रुपद गायन
सलमान खान-सारंगी
के. दामोदर राव-गायन
समित कुमार मलिक-ध्रुपद गायन
हितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव-तबला
संध्या तिवारी बापट
स्वर श्रृंगार संगीत संस्था-वृन्द वादन

29 दिसम्बर, 2018 गूजरी महल (सायं)
ध्रुपद केन्द्र, भोपाल-ध्रुपद गायन
साधना संगीत महाविद्यालय-ध्रुपद गायन
अना तनवीर, यू .के.-हार्प (विश्व संगीत)
भारती सिंह राजपूत-गायन
वर्षा अग्रवाल-संतूर
शुभ्रा गुहा-गायन

वादी संवादी
तानसेन कलावीथिका पड़ाव
सायं 4 से 6 बजे तक

27 दिसम्बर	28 दिसम्बर
अख़्तरी	**वायोलिन गाथा**
मलिका-ए-ग़ज़ल	वायोलिन और मैं
बेगम अख़्तर की दास्तान	अनुप्रिया देवताले
विद्या शाह	

थाती
25 से 28 दिसम्बर, 2018
पूर्वजों से प्राप्त सांस्कृतिक धरोहर की प्रदर्शनी

रंग सम्भावना
25 से 29 दिसम्बर 2018
ललित कला प्रदर्शनी
दोपहर 12-6 बजे तक
शासकीय ललित कला महाविद्यालय,
अचलेश्वर मंदिर के पास, ग्वालियर

संगतकार
तबला-रामेन्द्र सिंह सोलंकी, हितेन्द्र दीक्षित, गांधार राजहंस,
संतोष देशपाण्डे, यशवंत वैष्णव, मनोज पाटीदार, सलीम अल्लाहवाले,
अनिल मोये, पुण्डलिक भागवत, मुकुन्द भाले,
बालकृष्ण अय्यर, विनोद लेले, श्री अनंत मसूरकर,
हनीफ़ खान, अशोक कूर्म, ललित महंत
पखावज-आदित्य शर्मा, संजय आगले, रविराज पवार, अखिलेश गुन्देचा
हारमोनियम-धर्मनाथ मिश्र, जितेन्द्र शर्मा, विवेक बंसोड़, महेश पाण्डे, ज़मीर हुसैन,
विवेक जैन, विनय मिश्रा, मजीद खान, राघव सिंह राजपूत, अब्दुल सलीम खान
सारंगी-आबिद हुसैन, अब्दुल मजीद खान, अनीश मिश्रा,
भारतभूषण गोस्वामी, अली अहमद
टुम्बक-फ़खरूद्दीन गफ़्फ़ारी
गिटार-मनेन्द्र सिंह

समारोह की सभी संगीत सभाओं
एवं विमर्श में आप सादर आमंत्रित हैं।

तानसेन समारोह

विश्व संगीत समागम

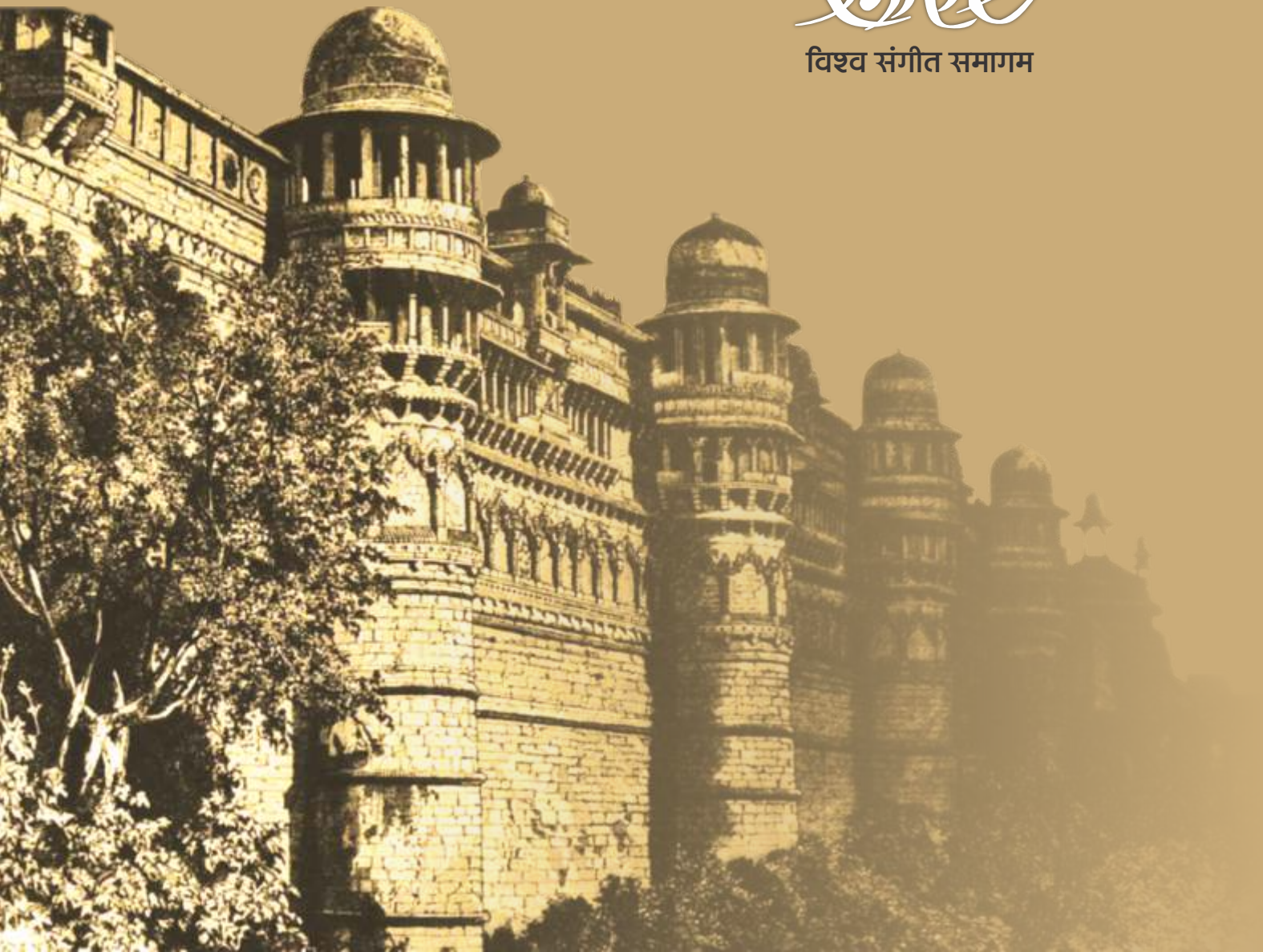

विश्व में हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत को अनूठी और अविस्मरणीय पहचान दिलाने में भारतीय संगीतज्ञों का महनीय योगदान है। संगीत सम्राट तानसेन इनमें सर्वोपरि हैं। शास्त्रीय संगीत की बगिया में पुष्पित-पल्लवित फूलों की भीनी-भीनी खुशबू से संगीत सम्राट की साधना की नगरी ग्वालियर विश्व संगीत समागम तानसेन समारोह के माध्यम से महकती रही है। संगीत के घराने, गुरु-शिष्य परम्परा और संगीत साधक संगीत की विरासत के इस महान उपक्रम में अपनी सक्रिय सहभागिता से समारोह की प्रतिष्ठा में श्रीवृद्धि करते हैं। मध्यप्रदेश शासन, संस्कृति विभाग हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की परम्परा के संरक्षण, संवर्धन, प्रोत्साहन और प्रचार-प्रसार के अपने दायित्व का निर्वाह भी निरन्तरता में करता रहा है। तानसेन समारोह के माध्यम से न केवल प्रदेश, देश बल्कि विदेशी संगीतज्ञ भी अपने संगीत की खुशबू बिखेरते रहे हैं। यही कारण है कि तानसेन समारोह को विश्व संगीत समागम के नाम से भी अब जाना जाने लगा है। प्रादेशिक या राष्ट्रीय संगीत रसिकों के अलावा इलेक्ट्रानिक माध्यम से अन्य देशों तक शास्त्रीय संगीत की पहुँच अब सुगम हो गई है। यह भी एक कारण हैं कि अब हमेशा के लिए हिन्दुस्तानी संगीत की स्वर लहरियाँ अमिट हो चली हैं।

तानसेन समारोह-2018 में शिरकत कर रहे सभी संगीतज्ञों एवं कलारसिकों को शुभकामनाएँ प्रेषित करते हुए विश्वास है कि संगीत का यह समारोह अपनी श्रृंखला का अभूतपूर्व सोपान सिद्ध होगा।

रेनू तिवारी
सचिव
मध्यप्रदेश शासन
संस्कृति विभाग

हारमोनियम राग संगीत में विवादी स्वर है

भरत ने अपने संगीत शास्त्र में स्वर सम्वाद की चार अवस्थाएँ बतायी हैं। वादी, संवादी, अनुवादी और विवादी। विवादी को भरत ने मूर्च्छना भेद से उत्पन्न एक तरह की असम्वाद की स्वर अवस्था कहा है। आज के हारमोनियम की भी हमारे संगीत में कुछ वैसी ही स्थिति है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य (refrence) में भातखण्डेजी ने उस स्वर को एक अर्थ में विवादी मान लिया है, जो स्वर राग में नहीं लगता है। हमारे राग संगीत में स्वर स्थान नियम के अनुसार हारमोनियम के स्वर विवादी सुनायी देते हैं। हारमोनियम के विवादी होने के कई कारण है -

● हारमोनियम से प्राप्त राग का सप्तक पश्चिम संगीत के टेम्पर्ड स्केल पर आधारित होता है। राग संगीत के स्वर स्थान और टेम्पर्ड स्केल के स्वर स्थान में मूलतः अन्तर होता है इसलिये हारमोनियम दोषपूर्ण स्वर और राग ज्ञान करवाता है। हारमोनियम में दो स्वरों के बीच श्रुति अन्तराल को मीड के द्वारा बजाया नहीं जा सकता। इस मीड के प्रभाव के बिना राग एक तरह से निर्जीव सुनायी देता है।

● कुछ हारमोनियम वादकों के प्रयास से किसी एक पिच से स्वर के प्राकृतिक सम्वाद के आधार पर हारमोनियम को ट्यून कर लिया जाता है, लेकिन तब भी यह ट्यूनिंग केवल किसी विशेष राग के लिये ही उपयोगी हो सकती है। यदि राग बदल दिया जाये तो फिर वही ट्यूनिंग बेसुरी सुनायी देती है। इसी तर्क के आधार पर हम यदि हारमोनियम को राग पूरिया के अनुसार ट्यून करलें तो वह राग मारवा के लिये अनुपयुक्त एवं बेसुरा होगा।

● हारमोनियम चूंकि एक 'की' वाद्य है और उसमें स्वरों का आन्दोलन सम्भव नहीं इसलिये कुछ स्वर प्रभाव उसमें असम्भव हैं जैसे- भैरव की धैवत, दरबारी की गंधार और मल्हार की गंधार आदि।

● यदि हमारी वाद्य संगीत परम्परा का अध्ययन करें तो पायेंगे कि कभी भी हमारे यहाँ सोच समझकर किसी 'की' इन्स्ट्रूमेन्ट का निर्माण नहीं किया गया। इसके बरक्स तार, गज और फूँक पर आधारित कई वाद्य बनाये गये। इससे पता चलता है कि हमारे वाद्य संगीत परम्परा में हारमोनियम जैसे वाद्य की कभी भी स्वीकृति नहीं रही।

● भरत के एक प्रयोग के अनुसार षड़ज ग्राम के धैवत और मध्यम ग्राम के गंधार की ध्वनियों के बीच बहुत अन्तर होता है। लेकिन हारमोनियम में दोनों स्वर को बजाने के लिये एक ही स्थान का प्रयोग किया जाता है। यानि हम इस बेसुरेपन की अनदेखी करते हैं।

● राग स्थापना के लिये सबसे आवश्यक बात यह है कि राग का प्रत्येक स्वर तानपुरे के षड़ज के साथ संवादित होना चाहिये लेकिन हम जब हारमोनियम पर राग की स्थापना करते हैं तो ऐसा तकनीकी रूप से संभव नहीं है। यदि आप षड़ज मध्यम संवाद स्थापित करते हैं तो षड़ज पंचम संवाद नहीं हो पाता और यदि आप षड़ज पंचम संवाद स्थापित करते हैं तो षड़ज मध्यम संवाद स्थापित नहीं हो पाता। इससे इस वाद्य के विवादी होने की स्थिति सिद्ध होती है। लेकिन आज की स्थिति देखें तो हारमोनियम पूरी शक्ति और शिद्दत के साथ हमारे राग संगीत में विवादी होने के बावजूद उपस्थित है। इसके भी कई कारण हैं-

● हमारे यहाँ राग विज्ञान की सही शिक्षा का अभाव और संगीत शिक्षण में स्वर चिंतन की कमी।

● हम चाहे अपने राग संगीत को शास्त्रीय संगीत कहें लेकिन वह एक तरह से परम्परागत संगीत अधिक है और चूंकि हम पिछले 100-150 सालों से हारमोनियम को लगातार अपने संगीत में भरपूर रूप से सुनते आ रहे हैं, इसलिये भी हम उसका ज्यों का त्यों अनुकरण / और अनुकरण को हमारे संगीत में एक मूल्य समझा जाता है / करते आ रहे हैं और हमने कभी उसके विवादी होने पर विशेष ध्यान नहीं दिया।

● महाराष्ट्र के नाट्य संगीत में हारमोनियम काफी समय से मौजूद है और गायिकी के क्षेत्र में महाराष्ट्र सदैव ही बहुत सक्रिय रहा है। इसलिये राग संगीत में भी उसका प्रवेश बहुत सहज तरीके से हो गया। यद्यपि हम यह भूल गये कि नाट्य संगीत एक तरह का लोक संगीत है और रागों का उसमें उपयोग धुन मात्र की तरह किया जाता है। राग उसमें उसी तरह मौजूद है जिस तरह राजस्थानी लांगाओं की गायिकी में राग और ख्याल संगीत के कुछ तत्व। राग विज्ञान के शाश्वत नियमों से नाट्य संगीत का कोई रिश्ता नहीं रहा है।

● चूंकि हमारे संगीत शिक्षण में स्वर चिंतन पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया इसलिये केवल तानपुरे की सहायता से रागत्व को प्राप्त करना एक दुष्कर क्रिया होती है। राग प्रभाव को आसान बनाने के लिये हारमोनियम में राग के सप्तक की सुगम उपस्थिति का हमारे संगीतज्ञों ने

बहुत स्वागत किया। हारमोनियम के कारण एक तरह के आर्केस्ट्राईज़ेशन को भी बल मिला जिसके कारण जो लोग संगीत को मनोरंजन के स्तर पर सुनते हैं और जिनकी तादाद बहुत अधिक होती है, ने इस तरह के एक नये आडियो एक्सपीरियंस की बहुत सराहना की। जाहिर है जिस प्रवृत्ति को श्रोता पसन्द करेंगे उसको बल मिलना स्वाभाविक है।

● हमारे परम्परागत संगीत में सोच विचार का अभाव रहा है। यद्यपि बड़े-बड़े उस्तादों ने और पण्डितों ने अपनी सृजनात्मक पहल से हमारी संगीत परम्परा को बहुत समृद्ध किया लेकिन उनकी यह यात्रा पूरी तरह से श्रवण पर केन्द्रित रही और राग विज्ञान के शास्त्र पर उन्होंने बहुत कम ध्यान दिया। ख्याल के विकास ने इस तरह की कई संभावनाओं को अवसर दिया जिसमें आप राग के 'स्वर स्थान' को साधे बिना और राग के शास्त्रीय चिंतन के बिना भी रसिकों का मन जीत सकते हैं। तेज गति की तानों की हारमोनियम से संगति ने संगीत सभाओं में एक नया वैचित्र्य पैदा किया और इस तरह हारमोनियम संगीत सभाओं में एक कौतुहल पैदा करने में समर्थ रहा और धीरे-धीरे उसकी पैठ बनती गयी।

● हम सदैव से अपने बुज़ुर्ग कलाकारों, उस्तादों और पंडितों के आभामण्डल से भावनात्मक रूप से इतने आतंकित रहते हैं कि हम परम्परागत संगीत के नाम पर क्या और कैसे गा-बजा रहें है इस पर विचार करने की जुर्रत भी नहीं करते हैं। इसे गुरू के प्रति एक तरह के समर्पण के रूप में भी देखा जाता है। चूंकि हमारे बुज़ुर्ग भी हारमोनियम का उपयोग करते रहें हैं इसलिये हम भी उसका उपयोग बिना किसी सोच विचार के करने लगे। आज यदि हारमोनियम हमारे संगीत में इतना लोकप्रिय एवं मौजूद है तो इसका बहुत कुछ श्रेय हमारे बुज़ुर्ग कलाकारों को भी जाता है।

● पिछले सौ डेढ़ सौ सालों से वृहत् रूप से हमारे राग संगीत की जो शिक्षा दी जा रही है उसका आधार मूर्च्छना भेद नहीं है जबकि हमारे राग विज्ञान का आधार ही मूर्च्छना भेद है। असल में 'मूर्च्छना भेद से उत्पन्न श्रुत्यंतर ही स्वरों को रागत्व प्रदान करता है'। इसी श्रुत्यंतर भेद के कारण वर्तमान राग विज्ञान में रागों के भिन्न-भिन्न स्वर स्थान अस्तित्व में आये। लेकिन राग विज्ञान की इस जटिल विद्या का 'अभ्यास'/ जो कि हारमोनियम की उपस्थिति में संभव नहीं हो पाता/ हमारी राग शिक्षा से बहुत दूर रहा। इसीलिये इस शिक्षा के अभाव में हमारे संगीतकारों के कानों में हारमोनियम ने कभी भी विवाद पैदा नहीं किया और वे इसे लगातार अपनाये रहे और हमने राग विद्या का एक समानान्तर नकली शास्त्र तैयार कर लिया और उसकी विशाल स्तर पर शिक्षा भी दी। हमारे तमाम संगीत शिक्षण संस्थानों में यही समानान्तर काम चलाऊ थ्योरी प्रचलित है और हमारे अत्यन्त प्रतिभावान विद्यार्थी इसे ही पढ़कर गोल्ड मेडल हासिल करते हैं।

हम ये सोचते हैं कि यदि आज की पीढ़ी को राग विज्ञान की उचित शिक्षा मिले और उसके कान हारमोनियम के बेसुरे सम्वाद को सुनना शुरू कर दे तो निश्चित रूप से हारमोनियम को उसकी सही जगह, जो कि राग के बाहर है, भेजा जा सकता है। आज जो भी लोग हारमोनियम का इस्तेमाल कर रहे हैं उसमें उनका दोष कम उनकी शिक्षा का दोष ज्यादा है जिसमें उन्हें यह नहीं बताया गया कि किस तरह हारमोनियम के स्वर राग के सही स्वर स्थान से अलग हैं। किस तरह षड़ज ग्राम का धैवत और मध्यम ग्राम के गंधार में असहनीय बेसुरापन विद्यमान है, जबकि हारमोनियम में दोनों स्वरों के लिये एक ही 'की' का इस्तेमाल किया जाता है। किस तरह हारमोनियम यह संभव नहीं होने देता कि आप केवल तानपुरे के साथ दरबारी की गंधार और मारवा की ऋषभ को सुनकर लगा सकें। किस तरह हारमोनियम के स्वर टेम्पर्ड होने के कारण समान विभाजन के आधार पर स्थापित किये गये हैं जबकि राग विज्ञान में स्वरों को भिन्न-भिन्न श्रुत्यंतर के आधार स्थापित किया जाता है।

अगर आज की राग शिक्षा पद्धति में उक्त बातों पर ध्यान दिया जाये, स्वर का वैज्ञानिक आधार पर चिंतन और अध्ययन किया जाये, केवल तानपुरे के साथ स्वर के स्वयंभू सम्वाद को सुना जाये और उसका राग में अमल किया जाये तो निश्चित रूप से हमारी आज की नयी पीढ़ी हारमोनियम से अपना रिश्ता कायम करने के पूर्व विचार करेगी और हारमोनियम का संसार फोक म्युजिक तक / भरत ने जिसे देसी संगीत कहा / सिमट कर रह जायेगा।

(इस लेख का शीर्षक सुप्रसिद्ध गायक श्री मुकुल शिवपुत्र से बातचीत के दौरान उपजा। हम उनके आभारी हैं।)

● गुन्देचा बन्धु

Malika-e-ghazal

It seems appropriate to call her a "rockstar" of her times, a diva if you may. Hundred years of the Begum and this Malika-e-ghazal (queen of Ghazal) is still remembered, loved and revered like very few other artists have ever been. As a student who learnt music in that lineage, I had the privilege of getting a glimpse into her life – the intrigue and enigma around her was irresistible. The centenary year gave me an opportunity to set out on a journey to discover her and the many interesting facets to her life, which I believe also made her music what it was. With her, you almost cannot separate the music from the person. Putting together the tribute Akhtari (my performance with Danish Husain) has been the most fascinating understanding of the complexities of Begum Akhtar.

Faizabad, located in present day Uttar Pradesh, where she was born in 1914, was the original capital of the princely state of Awadh. It had a befittingly rich artistic tradition of note. The highly accomplished Umrao Jan, immortalised in Mirza Hadi Ruswa's Urdu classic, Umrao Jan Ada, also came from here. Although the Faizabad and Lucknow of her times were not exactly at the helm of Avadhi tehzeeb and culture, but it was still strong enough to reflect in her piercingly effective ghazal renditions.

Akhtari was brought up by a single mother, Mushtari Bai. Her father belonged to Faizabad's gentry, but Akhtari never knew him. She had a twin sister, Zohra, who died in her childhood. The poignancy, which pervades her music, stems, perhaps, from the experience of loss at so early an age. In fact, the expression of love as pain is a constant in her work, making the ghazal an apt medium for the expression of her genius. Some friends, however, suggest that pain and depression had become such a refrain in her early life, that in later years, it became a habit – so much so she had a penchant for manufacturing sadness, even when there wasn't reason for any.

Akhtari started her career as a performer while still a teenager. During the '20s, she worked as a stage actress in Calcutta, most often essaying the role of the vamp. There are pictures of her from this time "in a black velvet Western dress and smoking a cigarette with a long black holder". She simultaneously sang at private mehfils before moving on to Bombay in the early '30s. There, she acted in five films but in 1939, she gave up a career in cinema. During this time, her mother, according to noted historian Saleem Kidwai, was concerned that Akhtari was getting more and more drawn into the film world and was even worried that she might give up her singing. As was quite common then, she took her to a Pir saheb who then asked her to pull out her "Bayaas", the collection of notes that most students would zealously guard as their life, opened it to a page and told her to sing that very ghazal in her next recording. This went on to become one of her most iconic, famous best sellers- Deewana banana hai to Deewana bana de (If you want to drive me mad, so be it). In 1958, however, she appeared in a cameo role as a professional singer in Satyajit Ray's Jalsaghar.

In Lucknow, she set up her own salon, managed very ably by her mother. Akhtari, by now, was an artiste of calibre and only the very distinguished were allowed access to her mehfils. She had also made a name for herself across north India through a number of 78-rpm recordings released under the Megaphone label. Even though she was trained by Gharanedaar Ustads in Khayal gayaki, it appeared that she was always attracted to

what the purist refers to as the "lighter" genres. The thumri and dadra became her calling.

But her greatest contribution to the field of Indian music was her rendition of ghazals. Perhaps, she inherited from her birthplace a deep appreciation of the sensibility underlying Urdu poetry. The classicism and the raagdari she brought to it remains unparalleled. That she would be featured in mainstream platforms for her ghazal gayaki was clearly an indication of the status it had acquired under her nurturing. Poets of her day wrote specially for her and she had the ability to make or break their careers. Eminent Urdu poets of her day, such as Jigar Moradabadi and Shakeel Badayuni, formed part of her inner circle and she had close friendships with many like Kaifi Azmi. Shakeel is said to have slipped a little chit of paper just as she was boarding a train from Lucknow to Bhopal, and by the time she reached, the evergreen Ai mohabbat tere anjaam pe ronaa aaya had emerged.

Akhtari lived many realities. She married a sophisticated barrister of his time, Ishitaq Ahmad Abbasi, juggling therefore, various personas, all of which made her life even more dramatic and eventful. The urge to be socially accepted, to be a housewife, a sister-in-law, an aunt was important for her and she reached out to her family members. Affable as she was, she became a popular member of the family and was called "Acchi Ammi" (the good mom). But this had its impact on her singing career as well. To belong to an elite Lucknow family and wanting to pursue a career as a singer and a performer was difficult. And so came a phase when she stopped singing. This further affected her, driving her into depression and addictions. And finally, it was evident that the only therapy that could help her was music. She started out again with a recording at the All India Radio in Lucknow. And significantly, she sang a soulful Dadra – Koyaliya mat kar pukar, karajwa laage kataar (don't call out to me dear nightingale, it pierces through my heart like a scimitar) In this new phase of her musical career, there was a dilemma over how to address her. The program officer at AIR, an Awasthi saheb, introduced her as Begum Akhtar. The name has remained since, etched in the hearts of many who adored and loved her.

But behind all these struggles was also a woman with a joie de vivre. She had many friends, acquaintances, fans and lovers. She was known for her shaukhi mizaaz, her sense of humour and wit.

A free-thinking, fiercely independent, some would even say radical, woman, she was supposedly the first woman vidushi or ustani who flipped tradition on its head by tying the "gandaa" or the official thread that initiates a shishya into a learning tradition, on her women students. So far, it had only been a practice among male disciples. Akhtari, Begum, ammi was most certainly an epoch maker, a trend-setter and definitely a lonely long-distance runner.

● VIDYA SHAH

मलिका-ए-ग़ज़ल

उन्हें अपने समय का रॉकस्टार कहना उपयुक्त होगा, यदि आप चाहें तो उन्हें देवी भी कह सकते हैं। बेगम के जन्म को लगभग सौ वर्ष बीतने को आए परन्तु मल्लिका ए ग़ज़ल को आज भी उतने ही सम्मान और प्रेम से याद किया जाता है, जितना की जब बेगम अख़्तर अपनी प्रसिद्धि के चरम पर थीं। बहुत कम कलाकारों को ही अपने जीवनकाल में यह सम्मान तथा प्यार मिला है। यह मेरा सौभाग्य है कि संगीत की शिक्षा प्राप्त करने के दौरान मुझे उनके जीवन में झाँकने का अवसर प्राप्त हुआ। विद्यार्थी के रूप में उनके जीवन की पहेली को समझना अत्यन्त लुभावनाकारी अनुभव था। शताब्दी वर्ष ने मुझे उनको समझने की यात्रा आरम्भ करने का एवं उनके जीवन के कई रोचक पहलुओं को खोजने का एक अवसर प्रदान किया है। ऐसा मेरा विश्वास है कि इसी चीज़ ने उनके संगीत को एक विशिष्टता प्रदान की। उनके व्यक्तित्व से व्यक्ति और संगीत अलग-अलग नहीं किए जा सकते हैं। बेगम अख़्तर को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए मेरा दनिश हुसैन के साथ संगीत कार्यक्रम अख़्तरी, उनके जीवन की जटिलताएँ समझने का सबसे विशेष अनुभव रहा।

उत्तर प्रदेश स्थित फ़ैज़ाबाद में बेगम अख़्तर ने जन्म लिया जो की अवध नवाबी राज्य की वास्तविक राजधानी था। यह स्थान कलात्मक परम्परा के सम्बन्ध में अत्यधिक धनी तथा महत्वपूर्ण केन्द्र था। मिर्ज़ा हादी रुसवा की उर्दू क्लासिक कृति उमराव जान अदा यहीं से आया था। यद्यपि उनके समय के फ़ैज़ाबाद और लखनऊ, अवधी संस्कृति और परम्परा के शिखर पर नहीं थे, किन्तु उनके ग़ज़ल गायिकी में काफी प्रभावशाली ढंग से परिलक्षित होते थे।

बेगम अख़्तर की परवरिश उनकी माँ मुश्तरी बाई ने की। उनके पिता फ़ैज़ाबाद के सभ्य वर्ग से आते थे किन्तु अख़्तरी उन्हें नहीं जानती थीं। उनकी जुड़वा बहन ज़ोहरा की मृत्यु बाल्यकाल में ही हो गयी थी। जीवन के आरम्भिक काल में जुड़वा बहन को खोने की पीढ़ा शायद उनके संगीत में व्याप्त थी। उनकी गायिकी में प्रेम का भाव, पीढ़ा के रूप में निरन्तर झलकता था जो की उनकी ग़ज़ल श्रेष्ठता का परिचायक था। हालांकि कुछ मित्रों का कहना है कि उनके जीवन के आरम्भिक काल में पीढ़ा एवं विषाद निरन्तर अपने को दोहराता है। यही चीज़ बाद के वर्षों में उनके जीवन की प्रवृत्ति बन गया। उन्होंने दु:ख को अपने जीवन का अभिन्न भाग बना लिया, यहाँ तक कि उन स्थितियों में जहाँ उसकी कोई आवश्यकता नहीं थी। किशोर अवस्था में उन्होंने अपने कामकाजी जीवन की शुरुआत कलाकार के रूप में की। बीस के दशक के दौरान उन्होंने कोलकाता में मंच अदाकार के रूप में शुरुआत की एवं अधिकांश में खलनायिका की भूमिका निभाई। उनके काले मखमली पाश्चात्य लिबास में होल्डर में फंसे सिगरेट पीते हुए फोटो आज भी उपलब्ध हैं। इसके साथ-साथ मुम्बई जाने से पहले, बेगम अख़्तर तीस के दशक में निजी महफिलों में गाया करती थीं। उन्होंने पाँच फिल्मों में काम किया, लेकिन वर्ष 1939 में उन्होंने सिनेमा को अलविदा कह दिया। प्रख्यात इतिहासकार सलीम किदवई के अनुसार, उनकी माँ उनके फिल्म के प्रति अधिक झुकाव के कारण चिंतित थीं और उनको लगता था कि उनकी बेटी गायन त्याग देगी। जैसा कि उस समय में आम था, उनकी माँ उन्हें पीर साहब के पास ले गयी, जिन्होंने उनको अपने बयाज़, ग़ज़लों का संग्रहण निकालने को कहा जो कि हर विद्यार्थी उत्साह के साथ अपने पास सुरक्षित रखता है, पन्ना खोलने के बाद उन्होंने बेगम अख़्तर को उसी ग़ज़ल को अगले रिकार्डिंग में गाने के लिए कहा। यही ग़ज़ल 'दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे, बाद में सबसे प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित बेस्ट सेलर साबित हुई। वर्ष 1958 में उन्होंने सत्यजीत रे के जलसागर में पेशेवर गायिका का केमीयो रोल किया।

लखनऊ में उन्होंने अपनी बैठक शुरू की जिसको उनकी माँ ने बड़ी निपुणता के साथ चलाया। अब तक, अख़्तरी एक माहिर कलाकार के रूप में स्थापित हो चुकी थी। महफ़िलों में केवल विशिष्ट लोगों को पहुँचने की इजाज़त थी। आपने मेगाफोन लेबल के अन्तर्गत जारी 78 आर.पी.एम. रिकार्डिंग्स के माध्यम से समूचे उत्तर भारत में नाम कमाया, जबकि वो घरानेदार उस्तादों द्वारा ख्याल गायिकी में प्रशिक्षित की गई थीं परन्तु ऐसा प्रतीत होता था, जैसा कि शुद्धतावादी उल्लेख करते हैं कि वो सदैव हल्की रचना पद्धति की तरफ आकर्षित रहती थीं। ठुमरी एवं दादरा उनका पेशा बना।

परन्तु हिन्दुस्तानी संगीत में उनका महानतम योगदान ग़ज़ल गायिकी थी। उर्दू शायरी की खास समझ के प्रति गहरी श्रद्धा जो कि शायद उनको अपने जन्म स्थान से विरासत में मिली थी। क्लासिज़्म एवं रागदारी जो वो इसमे लाईं वह अनूठा ही रहा। प्रतिष्ठित मंचों पर आपकी ग़ज़ल गायिकी के विशेष गुण, प्रतिष्ठा का साफ सूचक था जो कि उन्होंने परवरिश के दौरान अर्जित किया था। आपके समय के शायर विशेष तौर पर उनके लिए लिखते हैं कि वो किसी का भी भविष्य बनाने अथवा बिगाड़ने की क्षमता रखती थीं। उस समय की प्रतिष्ठित शायर जैसे की जिगर मुरादाबादी एवं शकील बदाँयुनी ने उनके साथ एक अंतरीय दायरा बना लिया था तथा उनकी बहुतों से गहरी दोस्ती थी जैसे की कैफ़ी आज़मी। ऐसा कहा जाता है कि जब वो लखनऊ से भोपाल के लिए रेल में चढ़ रही थीं, शकील ने काग़ज़ की एक छोटी पर्ची आपको थमाई एवं जब तक कि वो भोपाल पहुँच पाती, सदाबहार 'ए मोहब्बत तेरे अंजाम पे रोना आया' सामने आ चुका थी। अख्तरी ने कई सच्चाइयाँ जीं। उन्होंने अपने समय के प्रबुद्ध बैरिस्टर इश्तियाक अहमद अब्बासी से ब्याह किया, जिसके बाद उनकी ज़िंदगी और भी नाटकीय तथा घटनापूर्ण बन गयी। सामाजिक स्वीकार्यता, गृहिणी, सलहज, चाची बनने की इच्छा उनके लिए महत्वपूर्ण थी इसलिए वो परिवार के सदस्यों के प्रति समर्पित हो गयीं। मिलनसार होने के कारण आप परिवार की लोकप्रिय सदस्य बन गईं एवं अच्छी अम्मी के नाम से पुकारी जाने लगीं। परन्तु इसका असर आपकी गायिकी पर भी पड़ा। लखनऊ के कुलीन परिवार से सम्बन्धित होकर गायिका एवं कलाकार के रूप में भविष्य तलाशना कठिन था, तब वो स्थिति उभरी कि आपने गायिकी बन्द कर दी। इस चीज़ ने उन पर आगे और असर डाला जो कि उनको निराशा एवं नशे की तरफ खींच ले गया। आखिरकार यह स्पष्ट हुआ कि अगर उनकी सहायता के लिए कोई चिकित्सा है तो वो संगीत ही है। आपने दोबारा लखनऊ में आल इंडिया रेडियो के साथ रिकार्डिंग कर शुरुआत की एवं उल्लेखनीय ढंग से भावपूर्ण दादरा- 'कोयलिया मत कर पुकार, करजवा लागे कटार' गाया। उनके संगीत केरियर के इस नए चरण पर असमंजस की स्थिति बनी कि उनको किस नाम से बुलाया जाये। आल इंडिया रेडियो के कार्यक्रम अधिकारी, अवस्थी साहब ने उनका परिचय बेगम अख्तर के नाम से कराया। जब से ही यह नाम चला आ रहा है जो कि उनके अनेकों आराधना एवं प्रेम करने वालों के हृदयों में बसा हुआ है।

परन्तु इन सब जद्दोजहद के पीछे एक खुशदिली महिला भी थी। आपके बहुत से मित्र, परिचित, प्रशंसक एवं चाहने वाले थे। आपको शौख मिज़ाज, हंसी मज़ाक, हाज़िरजवाबी के लिए पहचाना जाता था।

खुले सोच की, पूरी तरह से स्वाबलम्बी, यहाँ तक कुछ कहेंगे अतिवादी, महिला जो कथित रूप से पहली महिला विदुषी अथवा उस्तानी जिसने परम्परा को नकारते हुए अपनी महिला विद्यार्थी को 'गंडा' बांधा, वह परम्परा जो की उस समय तक केवल पुरुष अनुयायी के प्रचालन में थी। अख्तरी, बेगम, अम्मी निःसंदेह एक युग की रचयिता, ट्रेंड सेट्टर तथा निश्चित रूप से एक अकेली लंबी दौड़ की धावक थीं।

●विद्या शाह

एक शहर. . . . एक घराना

ग्वालियर. . . जीवन के विरोधाभासी रंगों में डूबता उतराता. . . जीवन के अतिवादी छोरों को एक साथ छूता एक पथरीला शहर. . . जहाँ पत्थर को तराशकर इस हद तक जीवंत कर दिया गया कि पत्थर भी गुनगुनाते नजर आते हैं, वहीं सदियों से चम्बल की घाटियों में गूँजती बंदूकों की आवाजों के साथ संगीत स्वर लहरियाँ कानों में रस घोलती रही है . . . लेकिन इन परस्पर विरोधाभासी परिस्थितियों के बावजूद यह शहर अपने आप में खास है क्योंकि यह वही पथरीला शहर है जिसके बारे में हम सदियों से सुनते आए हैं कि इसके पत्थर लुढ़कते समय ताल देते हैं और बच्चे रोते समय सुर साधते हैं। ग्वालियर का अतीत गौरवमय रहा है, प्राचीन काल से ही इस क्षेत्र ने अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाने में सफलता प्राप्त की है। प्रागैतिहासिक काल में मानव ने इस क्षेत्र को अपनी कार्यशैली बनाया सम्पूर्ण क्षेत्र में बिखरे हुए शैलाश्रय तथा शैलचित्र उसके प्रमाण हैं। नगर के सीमांत पर स्थित गुप्तेश्वर तथा देवखो के शैलचित्र तथा मोहना के निकट टिकला के शैलचित्रों की खोज सुप्रसिद्ध इतिहासकार एवं पुराविद् डॉक्टर वाकणकर ने की थी। टिकला में दबुक नामक चितेरे के द्वारा उकेरे गए राजा-रानी के चित्र को इतिहासकारों ने पोट्रेट पेंटिंग का आदि प्रयास माना है। चित्रकला की यह परंपरा जो प्रागैतिहासिक काल से प्रारंभ हुई उसे ग्वालियर ने निरंतर जीवंत रखा। मध्यकाल में ग्वालियर के कलाकारों ने नई ऊँचाइयों को छू लिया यद्यपि इस काल के अधिकांश चित्रों को आक्रमणकारियों द्वारा नष्ट कर दिया गया और शेष कालकवलित हो गए किंतु फिर भी जो शेष हैं वह हमें मध्यकालीन ग्वालियर के सांस्कृतिक वैभव से परिचय कराते हैं। सिंधिया काल में भी ग्वालियर में चित्रकला का पर्याप्त विकास हुआ। मोती महल की राग माला पेंटिंग्स, कमला राजा महाविद्यालय के चित्रकला कक्ष के भित्ति चित्र, सिंधिया शासकों की क्षत्रियों के दशावतार पौराणिक कथाओं एवं राग-रागिनी चित्र तथा यहाँ के सावंतें और सरदारों की हवेलियों के भित्तिचित्र आज भी शोधार्थियों के लिए विपुल शोध सामग्री उपलब्ध करा रहे हैं। जीवाजी राव सिंधिया के शासनकाल में ग्वालियर आकर बसे इन कलाकारों के वंशज ग्वालियर नगर के चितेराओली नामक मोहल्ले में आज भी मौजूद है और मांगलिक अवसरों पर गृह द्वार तथा भवनों पर चित्रांकन करते हैं। चित्रकला की भाँति मूर्तिकला एवं स्थापत्य के क्षेत्र में भी ग्वालियर सदा से अग्रणी रहा है। ग्वालियर की तहसील डबरा से लगभग पच्चीस किलोमीटर दूर स्थित नागवंश की

प्राचीन राजधानी पद्मावती-पवाया (जिसका उल्लेख प्रसिद्ध संस्कृत नाट्य लेखक भवभूति ने अपने नाटक मालतीमाधव में किया है), में उत्खनन से प्राप्त यक्ष मणिभद्र की मूर्ति तथा सूर्य की द्विमुखी मूर्ति अत्यंत प्रसिद्ध है। प्राचीन पद्मावती से प्रारंभ हुई मूर्ति कला विकास की यह कहानी मध्य युग तक निरंतर चलती रही। ग्यारसपुर की विश्व प्रसिद्ध शालभांजिका, सुहानिया की सरस्वती, पद्मावती की गीत नृत्य पट्टिका, तुमैन की प्रसिद्ध कार्तिकेय प्रतिमाएँ इस कलात्मक यात्रा के महत्वपूर्ण पड़ाव है। सुहानीया का ककनमठ मंदिर भारत के रथ मंदिरों में एक विशेष स्थान रखता है। पन्द्रह फीट ऊँचा यह मंदिर नागर शैली का सुंदरतम उदाहरण है ,लोक गाथा है कि इस मंदिर का निर्माण रातोंरात भूतों ने किया था। बताते हैं कि यह मंदिर दो बार ध्वस्त किया गया पहली बार इल्तुतमिश द्वारा और दूसरी बार सिकंदर लोदी द्वारा, लेकिन इतने आक्रमण झेलने के उपरांत आज बीसवीं शताब्दी में भी मंदिर के भग्नावशेष इसकी भव्यता की कहानी कहते हैं। बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी के लगभग जब दिल्ली की सल्तनत पर तुर्क और अफ़गानों का आधिपत्य हुआ तभी से भारतीय संस्कृति के लिए अस्तित्व रक्षा का संघर्ष प्रारंभ हो गया। शिल्प और साहित्य के ही समान संगीत को भी इस युग में ऐसी विध्वंसात्मक प्रवृत्तियों का सामना करना पड़ा जिन्होंने भारतीय संगीत के शुद्ध रूप में मिश्रण का प्रयास किया। इन्हीं प्रयासों से गजल और कव्वाली जैसे गायन के हल्के-फुल्के स्वर उभरे। 1424 ईस्वी में ग्वालियर के तोमर वंशीय राजा डूंगरेंद्र सिंह तोमर ने अमीर खुसरो द्वारा प्रचारित की जा रही गायन की इन शैलियों दूरगामी परिणामों को समझकर लोक भाषा हिंदी में कृष्ण भक्ति से ओत-प्रोत पदों को भारतीय राग-रागिनी में ढालकर विष्णुपद नाम से प्रवर्तित किया। इतिहासकारों के अनुसार तोमर कालीन ग्वालियर की संगीत साधना भारत के सांस्कृतिक इतिहास की एक सर्वव्यापी प्रभाव शील उपलब्धि और अति महत्वपूर्ण घटना थी। ग्वालियर के प्रतापी शासक डूंगर सिंह और कश्मीर के सुल्तान जैनुल आब्दीन के मध्य संगीत की विरासत और धरोहरों का आदान प्रदान हुआ। डूंगरेंद्र सिंह, कल्याणमल एवं मानसिंह तोमर संगीत के प्रश्रयदाता थे। डूंगरेंद्र सिंह द्वारा विकसित विष्णुपद गायन शैली के पश्चात ,मानसिंह ने संभवत: ध्रुवपद एवं धमार शैलियों को जन्म दिया। मान सिंह के दरबार में नायक बैजू, बक्शू महमूद लोहंग आदि कलावंत थे। राजा मानसिंह ने मानकुतूहल नामक संगीत ग्रंथ की रचना भी की जिसमें राग-रागिनियों की शास्त्रीय विवेचना की गई थी, इसी ग्रंथ का फारसीअनुवाद फकीर उल्लाह द्वारा किया गया। ग्वालियर पर 1450 ईस्वी से 1526 ईस्वी तक तोमर शासन काल सांस्कृतिक स्वर्णकाल के रूप में जाना जाता है। तोमरों के पतन के साथ ही ग्वालियर के संगीत परिदृश्य में एक ठहराव सा आ गया। ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो वह काल, युग परिवर्तन का था जिसके पश्चात ध्रुपद के गर्भ से उपजे ख्याल गायन का आविर्भाव हुआ। इस शैली की स्थापना का श्रेय ग्वालियर के महाराजा जनकोजी राव सिंधिया के आश्रय में रह रहे नत्थन पीरबख्श को जाता है जिन्होंने अपने पुत्रों कादर बख्श और पीर बख्श को इस नवीन गायन प्रकार में पारंगत किया था। ख्याल गायन मैं ध्रुपद धमार की गंभीरता, टप्पे की कुछ ताने, ठुमरी की मृदुलता और तराने की लयकारी का समावेश होने से सभी प्रकार की गायिकी के अंग आते हैं और यही इसकी लोकप्रियता का कारण भी है, क्योंकि ख्याल गायन में कलाकार की प्रतिभा को असीमित अवसर प्राप्त होता है। सिंधिया वंश के राजाओं ने अपने दरबार में संगीतज्ञों को प्रश्रय देकर ग्वालियर की सांगीतिक परम्परा को एक नया आयाम देने का योजनाबद्ध कार्य किया। जनकोजी राव सिंधिया के पश्चात महाराजा दौलतराव सिंधिया के दरबार में एक साथ दो विभिन्न धाराओं के ख्याल गायक अपनी अपनी कला को सवांरते रहे। इसी काल में ख्याल शैली की गुरु शिष्य परम्परा का उदय हुआ और ग्वालियर परम्परा के मूलपुरुष नत्थन पीरबख्श खाँ साहब से सीखी हुई परम्परागत गायिकी एवं लखनऊ के बड़े मोहम्मद खाँ साहब से सुनी हुई गायिकी के मिश्रण से नत्थन पीरबख्श की वंश परम्परा में कादरबख्श के पुत्र उस्ताद हस्सू खाँ, हद्दू खाँ और नत्थू खाँ ने एक अलौकिक गायिकी का निर्माणकर ग्वालियर घराने की स्थापना की। इन गुणी कलाकारों द्वारा परिवर्धित ख्याल शैली को ही गायकों की आने वाली पीढ़ियों ने भी अपनाया। ख्याल गायन की विशिष्ट शैली के विकास को लेकर भी एक बड़ी ही रोचक कहानी सुनी जाती है, दरअसल हुआ कुछ यूँ कि प्रख्यात ध्रुवपद गायक और लखनऊ के तत्कालीन नवाब गयासुद्दीन हैदर के दरबार के प्रसिद्ध गायक बड़े मोहम्मद खाँ, जिन्हें मेहबूब खाँ के नाम से भी जाना जाता है, की गायिकी की तारीफ जब ग्वालियर के महाराजा दौलतराव सिंधिया तक पहुँची तो उन्होंने उनका गायन सुनने के लिये उन्हें अपने दरबार में आंमत्रित किया। बड़े मोहम्मद खाँ साहब, ग्वालियर के संगीतज्ञों की सीखने की क्षमता के बारे में बखूबी

जानते थे, और साथ ही यह भी चाहते थे कि उनकी बंदिशों पर उनका एकाधिकार बना रहे, कोई अन्य कलाकार उन्हें सीख नहीं ले। इसलिये उन्होंने महाराज दौलतराव सिंधिया के आमंत्रण को स्वीकार तो कर लिया, लेकिन निवेदन किया कि हुजूर में आपके लिए गाऊंगा तो जरूर लेकिन, मेरी एक शर्त है कि जब मैं गायन करूँ तो वहाँ कोई दूसरा गायक मौजूद ना हो। महाराज ने बड़े मुहम्मद खाँ की यह शर्त मान ली और गायन सभा का आयोजन किया गया। लेकिन ग्वालियर जैसे संगीत प्रेमी नगर में जहाँ पग-पग पर संगीतज्ञ हो ऐसा होना लगभग असंभव था कि कोई ख्याल संगीतज्ञ अपनी कला का प्रदर्शन महाराज के समक्ष करे और किसी दूसरे संगीतज्ञ के कान खड़े न हों। इसलिये महाराज दौलतराव सिंधिया के गोपनीयता बरतने के तमाम प्रयत्नों के बावजूद जब बड़े मुहम्मद खाँ, महाराज के आंतरिक कक्ष में अपनी गायन कला का प्रदर्शन कर रहे थे तो दरबार का एक संगीतज्ञ, पलंग के नीचे छुप गया, और वहाँ छुपकर उसने ना केवल बड़े मुहम्मद खाँ का गायन सुना बल्कि उसे इस हद तक आत्मसात कर लिया कि वो उनकी सारी बंदिशों में निष्णात हो गया। ये संगीतज्ञ थे नत्थू खाँ। बाद के वर्षों में नत्थू खाँ ने अपने भाईयों हस्सू खाँ और हद्दू खाँ को बड़े मुहम्मद खाँ की, पैचदार, बलदार, और फिरत तानों का अभ्यास भी कराया और तभी से सही मायनों में संगीत के ग्वालियर घराने का उदय हुआ। यद्यपि ग्वालियर घराने के जन्मदाता नत्थन पीर बख्श ने ख्याल गायिकी को अधिक रूचिकर बनाने के लिये ध्रुवपद के कलात्मक अनुशासन को ख्याल गायिकी से आबद्ध कर ग्वालियर घराना शैली का नाम दिया और उसका रियाज अपने तीनों नातियों हस्सू खाँ, हद्दू खाँ और नत्थू खाँ को भी कराया तथापि बाद में इन तीनों ने महाराजा दौलतराव शिंदे की चाहत के अनुरूप अपनी गायिकी में ग्वालियर घराने के गांभीर्य को बड़े मुहम्मद खाँ की फिरत तानों से अलंकृत भी किया। इसी संबंध में एक और किस्सा भी प्रचलित है। श्रीमंत महाराज दौलत राव सिंधिया ख्याल गायिकी के गायक नत्थन पीर बख्श के तीनों नातियों हस्सू खाँ, हद्दू खाँ और नत्थू खाँ की सांगीतिक उन्नति से अत्याधिक प्रसन्न थे, किन्तु वे यह भी चाहते थे कि यदि बड़े मोहम्मद खाँ की चमत्कारी दबंग फिरत तानों वाली ख्याल गायिकी का समावेश इनकी गायिकी में हो जायें तो एक नवीन सशक्त गायन शैली विकसित हो सकती है और यह तभी संभव था जब बड़े मोहम्मद खाँ उन तीनों को विधिवत तालीम देते। बहुत कोशिशों के बावजूद बड़े मुहम्मद खाँ इसके लिये तैयार नहीं हुये। श्रीमंत दौलत राव सिंधिया, संगीत प्रेमी होने के साथ ही गुण ग्राहक भी थे अतः उन्होंने बड़े मुहम्मद खाँ पर जोर जबरदस्ती करने की अपेक्षा एक योजना बनाई। जिसके तहत तीनों युवकों को यह निर्देश दिये गये कि जब महाराज के आंतरिक कक्ष में बड़े मुहम्मद का गायन हो तब वे पर्दे के पीछे खड़े होकर उनकी गायन शैली को सुनें और समझे। कई दिनों तक यह सिलसिला जारी रहा इन तीनों तीव्र बुद्धि युवकों ने जब बड़े मोहम्मद खाँ के गायन को पूरी तरह आत्मसात कर लिया तो महाराज ने एक दिन दरबार में एक संगीत सभा का आयोजन किया, इसमें दरबार के सभी संगीतज्ञ एवं स्वयं बड़े मुहम्मद खाँ, उपस्थित थे। महाराज की आज्ञा पर हस्सू खाँ, हद्दू खाँ और नत्थू खाँ, इन तीनों लडकों ने अपनी गायिकी और बड़े मुहम्मद खाँ की गायिकी का सार प्रस्तुत किया जिसे सुनकर बड़े मोहम्मद खाँ अत्यंत क्रोधित हो गये और, मेरे साथ दगा किया गया, अब में यहाँ एक पल भी नहीं रूकूँगा। 'कहते हुये दरबार छोड़कर चल दिये। तमाम संगीतज्ञों और दरबारियों ने उन्हें बहुत समझाया लेकिन उन्होंने किसी की भी बात नहीं मानी और हमेशा के लिये ग्वालियर छोड़ दिया। बताते हैं उस समय उन्हें रियासत की ओर से बारह सौ रूपये मासिक वेतन दिया जाता था। एक अन्य प्रचलित किस्से के अनुसार बड़े मोहम्मद खाँ ने तीनों लड़कों का गायन सुनने के बाद नत्थू खाँ से (कड़क बिजली) की तान एक बार फिर दोहराने के लिये कहा और जैसे ही नत्थू खाँ ने कड़क बिजली की तान दोहराई उनके प्राणों ने शरीर छोड़ दिया। हस्सू खाँ, हद्दू खाँ और नत्थू खाँ ने बढे मुहम्मद खाँ की शैली की जिन विशेषताओं को अपनी ख्याल गायन शैली में मिलाकर जिस अनूठी गायन शैली का विकास किया था कालान्तर में उसे ही ग्वालियर घराने की गायिकी के नाम से जाना जाने लगा।

हस्सू खाँ-हद्दू खाँ के जमाने में ग्वालियर एक सिमटा हुआ छोटा सा शहर था। कहा जाता है कि छोटी और संकरी गलियों में परस्पर सटे हुये मकानों में जब ये तीनों भाई, दिन के अधिकतर समय रियाज किया करते तो कई बार पास पड़ौस में रहने वालों को असुविधा होती। यह देखकर तीनों भाई शहर के बाहर स्थित एक बगीचे में सुबह सबेरे ही अपने-अपने तंबूरे लेकर आ जाते और दिन भर रियाज करते रहते। बाद में जब उनके शिष्य बने तो वो भी वहीं आकर उनसे शिक्षा ग्रहण करने लगे। धीरे-धीरे लोग उस बगीचे का मूल नाम भूलकर उसे 'गवैयों

की बगिया' के नाम से जानने लगे और देशभर के संगीत संसार में इस 'गवैयों की बगिया की ख्याति हो गई। हस्सू खाँ, हद्दू खाँ ने मियाँ मल्हार, यमन, दरबारी कान्हड़ा विहाग तोड़ी और मालकौंस में श्रेष्ठ रचनायें रचीं। हद्दू खाँ कुछ समय लखनऊ में भी रहे और जबलपुर, कलकत्ता, पूना वगैरह शहरों में भी ग्वालियर घराने की गायिकी का कुशल प्रदर्शन दोनों भाईयों ने किया। अंत समय इन्हें गवैयों की बगियाँ में ही दफनाया गया। हालाँकि आज इस स्थान पर बगीचा नहीं बचा है लेकिन इन दोनों महान् संगीतज्ञों की समाधी प्रत्येक संगीतज्ञ की श्रद्धा का केन्द्र है।

ग्वालियर में जयाजी राव शिन्दे (1843-1886 ई.) का राजकाल शांतिपूर्ण होने के कारण कलाओं, विशेषकर सांगीतिक दृष्टिकोण के फलने-फूलने का समय रहा। महाराजा जयाजीराव के दरबार में उस समय ग्वालियर घराने के प्रवर्तक हस्सू खाँ, हद्दू खाँ सितार वादक अमीर खाँ, सरोद वादक सादत खाँ, प्रख्यात बीनकार बन्दे अली खाँ, सारंगीवादक साबित खाँ, प्रख्यात मृदंग वादक सुखदेव सिंह, कुदव सिंह, और जोरावर सिंह जैसे एक से बढ़कर एक कलाकार थे। दरबार के अलावा ग्वालियर नगर में भी उन दिनों प्रख्यात संगीताचार्य बाला गुरूजी, जोशी बुआ, बाबा दीक्षित, शंकर पंडित, ततैया, मंगो, रेशम और चन्द्रभाभा जैसे गायक गायिकायें भी थे। बाजीराव पेशवा द्वितीय के दरबारी ध्रुपद गायक चिन्तामणि मिश्र भी पेशवा की मृत्यु के बाद जयाजीराव सिंधिया के राजश्रय में आ गये थे। इनके बारे में मशहूर था कि वे नित्यप्रति पाँच ध्रुवपदों की रचना करके भगवान को अर्पित करते थे और परम ईश्वर भक्त थे। इन सभी विलक्षण संगीतज्ञों की कला के गुणग्राहक स्वयं महाराजा जयाजीराव थे, और जब तब उनके सामने इनकी कला का प्रदर्शन भी होता रहता था। इनमें से सिर्फ एक कलाकार इसका अपवाद था, जिसने महाराज के सामने गायन नहीं करने की कसम अपने गुरू को दी थी। कारण क्या रहा था, यह किसी को नहीं मालूम वो कलाकार थे बाबा दीक्षित। लेकिन गुणग्राहक एवं सहनशील महाराज, कलाकार की संवेदनशीलता का आदर करते थे और राजदण्ड के भय का प्रदर्शन किये बिना विनम्र श्रोता की भांति बाबा दीक्षित का गायन सुनने के लिये लालायित रहते थे। एक दिन किसी खास अवसर पर सरकार बाड़े में भोजन की पंगत बैठी। सरकार (महाराज) वहाँ उपस्थित नहीं थे, प्रचलन अनुसार लोगों ने भोजन प्रारंभ होने से पूर्व बाबा दीक्षित से श्लोक गायन करने को कहा। लोगों के आग्रह पर बाबा दीक्षित ने श्लोक गाना प्रारंभ किया इतने में ही महाराज वहाँ पहुँच गये। उनके वहाँ पहुँचते ही बाबा ने गाना बंद कर दिया। महाराज जयाजीराव, बाबा से बोले, ''श्लोक की प्रत्येक पंक्ति गाने पर एक सोने की मोहर दूँगा, श्लोक गाओ'' बाबा दीक्षित ने इस प्रलोभन के बावजूद श्लोक नहीं गाया, और बिना खाना खाये वहाँ से उठकर चले गये। महाराज भी लौट गये, लेकिन बाबा का गाना नहीं सुन पाने का मलाल तो उनके मन में था ही, फिर भी वे जोर जबर्दस्ती करके कलाकार के मन को आहत करने के खिलाफ थे। बाबा दीक्षित मध्य रात्रि में अपने कुछ चुने गये साथियों के बीच गायन किया करते थे, यह बात जब महाराज को पता चली तो उन्होंने उस बस्ती के चैकीदार को बुलवा भेजा और उसको हुक्म दिया कि जैसे ही बाबा दीक्षित गाने के लिये बैठें, हमें खबर दी जाये। बस फिर क्या था मध्यरात्रि में जैसे बाबा दीक्षित अपने निवास पर गाना शुरू करते, महाराज को खबर दी जाती और महाराज बस्ती के चौकीदार की वर्दी पहनकर घोड़े पर सवार होकर बाबा दीक्षित के घर के पास खड़े हो जाते और उनका अप्रतिम गायन सुनकर आनंदित होते। ऐसी थी महाराज जयाजीराव की गुण ग्राहकता और संवेदनशीलता की चरम सीमा। महाराजा की व्यक्तिगत रूचि संगीत में होने के कारण ही दरबार में इतने सुविख्यात गायक और वादक थे और इसीलिये उस दौर में ग्वालियर में संगीत अपने चरमोत्कर्ष पर था। बताते हैं, एक बार जयपुर के महाराजा रामसिंह जिनके दरबार में ग्यारह सौ कलाकार थे ग्वालियर आये तो ग्वालियर दरबार के इन विख्यात कलाकारों का गायन वादन सुनकर अत्यंन्त प्रसन्न होकर महाराजा जयाजीराव से बोले, ''बाग तो हमने लगाया है पर बढ़िया बढ़िया फूल तो आपने चुने हैं।'' कदाचित संगीत नगरी ग्वालियर का यह सौभाग्य था कि महाराजा जयाजीराव शिन्दे के बाद, ग्वालियर के शासन की बागडोर महाराजा माधवराव (प्रथम) (1886-1925 ई.) के हाथ में आई, जो स्वयं संगीत के पारखी, विद्वान संगीत रचानाकार और कुशल गायक भी थे, वे स्वयं शास्त्र शुद्ध एवं अभिनय पूर्वक गायन करते थे और यदि किसी गायक वादक द्वारा कोई चीज या बंदिश किसी भी गायिकी अंग के अनुरूप नहीं होती थी तो तत्काल स्वयं गाकर या शास्त्र शुद्ध विवेचन कर उसे समझा देते थे। श्रीमंत मातोश्री सख्या महाराज की छत्री के उत्सव मे गाने बजाने का बहुत बड़ा जलसा किया गया था। रात्रि 9 बजे से प्रारंभ होकर दूसरे दिन

दोपहर बारह बजे तक गाना बजाना चला। कोलकाता की विख्यात गायिका अलका जान, बंबई की प्रसिद्ध इजिपशियन नर्तकी मेरी एवं कई अन्य नामवंत कलाकारों को जलसे में बुलाया गया था। रात भर संगीत एवं नृत्य के कार्यक्रम चलते रहे। सुबह सबेरे माधव महाराज स्वयं तानपुरा लेकर बैठे और गजल एवं गीत गाने लगे। उनके गायन में मातृप्रेम एवं भक्तिरस इतना भरा हुआ था कि उनके दोनों नेत्रों से अश्रु प्रवाह प्रारंभ हो गया। उपस्थित श्रोतावर्ग भी आपके गायन से भाव विह्वल हो गया। जनवरी 1918 में माधवराव सिंधिया ने संगीत शिक्षण के आधुनिक जनक पंडित भातखंडे को ग्वालियर आमंत्रित किया और माधव संगीत महाविद्यालय की स्थापना करके संगीत नगरी ग्वालियर के सांगीतिक अवदान में एक नवीन अध्याय जोड़ा। ग्वालियर में बहुआयामी शिक्षा और जन सुविधाओं के प्रसार का श्रेय पूर्ण रूप से महाराज माधवराव सिंधिया को जाता है। वह आधुनिक सोच के दूरदर्शी शासक थे। उनके काल में स्टेट वास्तुविद हैरिस और लेक ने इंडो सारसेनिक शैली में विक्टोरिया कॉलेज भवन बनवाया, इस भवन के विस्तृत बरामदे में पत्थर पर काटी गई जालियाँ जिसे झिलमिली कला के रूप में जाना जाता है, के नायाब नमूने दृष्टिगोचर होते हैं। झिलमिली कला का विकास ग्वालियर क्षेत्र में मध्य युग में हुआ था। चौदहवीं शताब्दी के पुरातत्व अभिलेखों में भी झिलमिली निर्माण का उल्लेख आता है। संगीत सम्राट तानसेन और मोहम्मद गौस के मकबरों की वास्तु कला की विशेषता यही झिलमिली कला है। ग्वालियर में रंग परम्परा के उदाहरण प्राचीन काल से ही मिलते हैं। प्राचीन भारतीय शास्त्रीय रंगमंच में भवभूति द्वारा रचित संस्कृत नाटक उत्तररामचरितम् एवं मालती माधवम का मंचन ग्वालियर के निकट पवाया के विकृष्ट मंच पर हुआ था ऐसा कतिपय शोधार्थियों का मत है। मध्यकाल में मानसिंह तोमर के काल का वृत्ताकार खुला प्रेक्षागृह ग्वालियर के नजदीक बरई में है। आधुनिक काल में भी ग्वालियर मध्य प्रदेश का एक महत्वपूर्ण रंग पीठ है यहाँ मराठी का पहला नाटक संत कान्होपात्रा विष्णुदास भावे ने सन 1842 में लिखा और मंचित किया था। 1870 में मुंबई की मराठी नाटक कंपनी यहाँ आकर कई नाट्य प्रयोग किए, इस वातावरण से ही उत्साहित होकर महाराजा माधवराव सिंधिया प्रथम ने आधुनिक रोमन शैली का प्रोसेनियम आर्च वाला बॉक्स रंगमंच टाउन हॉल थिएटर बनवाया था, जिससे यहाँ नाट्य गतिविधियां केंद्रित हुईं। ग्वालियर जैन पुरातत्व और संस्कृति का भी एक अनूठा केंद्र है और ग्वालियर के जैन मंदिर अपनी विशालता उत्कृष्ट स्थापत्य कला के कारण आकर्षण का केंद्र रहे हैं। चौदहवीं और पन्द्रहवीं सदी में जैन मुनि और आचार्यों के प्रभाव से तोमर वंश राजा डूंगर सिंह और कीर्ति सिंह के शासनकाल में ग्वालियर दुर्ग के चारों ओर पन्द्रह सौ से भी अधिक जिन प्रतिमाओं का उत्खनन हुआ है। इसे ग्वालियर के वैभवशाली सांस्कृतिक अतीत का प्रभाव ही कहा जाएगा कि लिटिल बैले ट्रूप के लिए रंगकर्मी प्रभात गांगुली और गुलवर्द्धन ने तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू से उनकी संस्था के लिए ग्वालियर में कोई स्थान उपलब्ध कराने का आग्रह किया, जिसके फलस्वरूप यह संस्था कई वर्षों तक ग्वालियर सक्रिय रही। देखा जाए तो ग्वालियर में ऐसा बहुत कुछ है जो हिंदुस्तान की गंगा जमुनी तहजीब और धर्मनिरपेक्षता का परिचय देता है। यहाँ ख्वाजा खानून और मोहम्मद गौस की दरगाहों पर उसी शिद्दत के साथ सर झुकाए जाते हैं जितने खेड़ापति हनुमान मंदिर या मांढरे की माता पर। रियासत काल की परंपराओं को निभाते हुए सिंधिया घराने के प्रमुख, आज भी दशहरे के अवसर पर जहाँ शमी वृक्ष का पूजन करते हैं वहीं मंसूरशाह की दरगाह पर चादर चढ़ाकर प्रसाद का फूल झोली में गिरने तक इंतजार भी करते हैं। शहरके बीचों-बीच स्थित फूलबाग में मानवधर्म साधना स्थल थियोसोफिकल लॉज, गोपाल मंदिर, मोती मस्जिद और गुरुनानक गुरुद्वारा का विशिष्ट समागम इस शहर के सर्वधर्म समभाव की पहचान है। कदाचित इस गंगा-जमुनी संस्कृति के पीछे सुरसाधकों द्वारा सदियों पहले बोये हुए वही सुरीले बीज हैं जिनने इस पथरीले शहर के कणकण में संगीत संजोकर इसे संगीत नगरी बनाया और जहाँ आज भी विश्व संगीत समागम, तानसेन समारोह के पहले दिन तानसेन की मजार पर हरिकथा और मिलाद के सुर बारी-बारी से गूँजते हैं।

●दिनेश पाठक

वायोलिन गाथा
वायोलिन और मैं

वायोलिन सबसे प्रसिद्ध तथा विश्व में व्यापक रूप से फैला अन्तर्राष्ट्रीय वाद्ययंत्र है। वायोलिन को सबसे पहले विशेष रूप से इसके जन्म स्थान इटली में मान्यता मिली जहाँ प्रारम्भिक निर्माताओं, गास्पारो द सालो, एंड्रिया अमाती, युवान पाओलो माग्गिनी ने इसके औसत अनुपातों को निर्धारित किया। ऐसा माना जाता है कि इटेलियन लूथियर एंड्रिया अमाती ने आधुनिक वायोलिन का आविष्कार 1555 में किया। उन्होंने और उनके पुत्रों ने आने वाली पीढ़ियों के लिए वायोलिन बनाने की कला को निरन्तर बनाए रखा। सोलहवीं सदी के मध्य यह कला विकसित हो अपने चरम पर थी जब स्ट्रादीवेरी और गुआरनरी परिवार जो कि इटली के क्रिमोना शहर में रहते थे, दुनिया के सर्वश्रेष्ठ वायोलिन बनाए।

भारत में यह माना जाता है कि सत्रहवीं सदी की शुरुआत में बालूस्वामी दीक्षितार पहले वायोलिन के कलाकार थे जिन्होंने परम्परागत कर्नाटक शास्त्रीय संगीत का वादन वायोलिन पर किया। इसीलिए आज ही दक्षिण भारत में वायोलिन का अधिक प्रयोग है, वहाँ संगतवाद्य के रूप में भी इसका प्रयोग होता है और इसके वादन की एक स्पष्ट तकनीक दिखायी देती है, लगभग एक सी तकनीक का अनुसरण सभी करते हैं जबकि इसके विपरीत हिन्दुस्तानी संगीत में वायोलिन का ज्यादा प्रयोग नहीं दिखता, कुछ गिने चुने ही वायोलिन वादकों को ख्याति मिली, पं. बी.जी. जोग, विदुषी शिशिर कनाधर चौधरी, पं. डी.के. दातार, डॉ. एन. राजम कुछ ऐसे ही नाम हैं जिन्होंने अपने अपने ढंग से इस वाद्य को अपनाया और वादन किया।

मेरी संगीत या कहें वायोलिन यात्रा अन्य सभी से भिन्न रही, कई तरह से। मैं अब 35 साल की संगीत साधना के बाद जब पीछे मुड़कर देखती हूँ तो चीज़ें स्पष्ट दिखाई देती हैं। सबसे पहले तो शायद यह मेरी नियति ही थी, एक साहित्यिक और सुसंस्कृत माहौल के परिवार में जन्म हुआ और एक महान कवि की बेटी होने का सौभाग्य रहा। मेरे पिता प्रो. चन्द्रकान्त देवताले, हिन्दी के वरिष्ठ कवि और मेरी माँ का संगीत के प्रति

प्रेम और लगाव ही मेरे वायोलिन वादन की मूल प्रेरणा और वजह रहे। मेरा मानना है कि संगीत की व्याकरण ही आप गुरुजनों से सीख सकते हैं लेकिन उसे अपनाना, उसमें विलीन हो जाना और अपनी आत्मा की आवाज़ बनाने तक का सफर हमें स्वयं ही करना पड़ता है। यह मेरा परम सौभाग्य रहा कि मेरे माता-पिता ने इस यात्रा में मुझे भरपूर सहयोग दिया। मुझे आज़ादी दी, प्रोत्साहन दिया और हर कदम पर मुझे दिशा दी। एक अलग किस्म की सृजनात्मकता एक कवि की बेटी होने की वजह से ही आ सकी। पिताजी ने हमेशा मौलिकता पर ज़ोर दिया। उनके लिए कविताओं की तरह मेरे लिए वायोलिन आत्माभिव्यक्ति का माध्यम बना। 250 रु. का वायोलिन मेरे लिए पापा इन्दौर से खरीदकर लाए और पता नहीं चला कब वह मेरी जिन्दगी बन गया, इबादत बन गया... हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत, राग-आरोह-अवरोह-पकड़ से बहुत ऊपर की चीज़ है। स्वर लगाना, उसमें आस होना प्राण होना बेहद जरूरी है और यह सतत् साधना से ही मुमकिन हो पाता है। तकनीकी रूप से बहुत अच्छा हो और यदि उसमें भावनात्मकता नहीं है तो वह संगीत असरकारक नहीं हो सकता। इस असर के लिए 'साधक' बनना होता है, तभी संगीत में वह आध्यात्मिकता आती है जिसे सुन-गुनकर व्यक्ति स्वयं को शांत कर ईश्वर से जुड़ सके। वायोलिन सीखना शुरू करने से पहले मैंने चार वर्षों तक गायन सीखा। यह एक पर्दाविहीन वाद्य है अन्य सभी वाद्यों से ज्यादा मुश्किल। अत: इसे शुरू करने से पहले स्वर-ज्ञान आवश्यक है, मौलिकता किसी भी कलाकार में होना बेहद जरूरी है, जीवन के अनुभव और उतार-चढ़ाव के दौर से निकलने पर ही वह चीज़ पैदा होती है जिसे हम 'फीलिंग्स' कहते हैं। मेरे पिताजी की पंक्तियाँ हैं, वे कहते थे- *जो वेदनाविहीन हैं वे सपने नहीं देख सकते। यातनाहीन, जख्म जिनके पास नहीं मन, भीतर में और बाहर वो कविता क्यूँ लिखना चाहते हैं।* यही बात संगीतकारों के लिए भी है।

पिताजी की पंक्तियाँ : *पानी का दरख़्त नदी में / और नदी समुद्र में मिल जाती है / फिर भी पूरी नहीं होती प्रेम की परिक्रमा / क्षितिजों के पार कुछ ढूँढती ही रहती हैं / कवियों की आँखें....*

यह अद्भुत पंक्तियाँ हैं... इसी तरह हम संगीत साधकों को भी अपनी ढूँढ, खोज जारी रखने की जरूरत है। मेरी भी यही सतत् कोशिश रहती है और इसी चिन्तन और साधना के साथ मैं अपनी अलग शैली विकसित कर सकी। गायिकी अंग के साथ तंत्रकारी का एक संतुलित समावेश किया है मैंने। यह मेरा सौभाग्य रहा कि मेरी वायोलिन की शिक्षा सरोद और सारंगी के विख्यात और महान कलाकारों उस्ताद अमजद अली खाँ और पं. रामनारायण जी के सानिध्य में हुई। सारंगी और सरोद की बातों को मैंने अपनी सोच, अपने ढंग से वायोलिन पर आत्मसात करने की कोशिश की। उस्ताद अमीर खाँ साहिब का गायन सुनते ही सोती थी और अभी भी सुनती हूँ, मेरे बेहद प्रिय गायक हैं। इनके गायन का सुकून, ठहराव और शुद्धता ने मुझे बहुत प्रभावित किया और मुझ पर गहरी छाप छोड़ी। यह मेरा सौभाग्य ही रहा। यह सब मिलकर मैं अपनी एक अलग शैली को, अलग सोच को लेकर अपनी संगीत यात्रा के पथ पर अग्रसर हूँ।

मेरे पिताजी के शब्द मेरे मन में सदा बचते हैं, वे मुझे महात्मा बुद्ध की वाणी याद दिलाते थे- *'अप: दीप, भव:'*- अपना दीपक स्वयं बनो। पाखण्ड और दिखावे से रहित जीवन हो और संगीत हो।

इस शास्त्रीय संगीत से भी आत्मबोध और आत्म-ज्ञान 'सेल्फ रियलाइज़ेशन' सम्भव है, लेकिन संगीत का माहौल और स्वरूप तेज़ी से बदला है, बदल रहा है, इसे भी शॉर्टकट और परिवारवाद से बचाना होगा। गुरु-शिष्य परम्परा समाप्ति के कगार पर है। हमारे समय के बुजुर्ग संगीतकारों ने अपना काम बखूबी कर दिया है, अब समय अगली पीढ़ी का है, युवा और परिपक्व संगीतकारों को आगे लाकर उन्हें प्रोत्साहित और प्रेरित किया जाए, आम जनता तक इस संगीत को पहुँचाकर आज के भटके हुए युवा वर्ग को एक दिशा देने का प्रयत्न किया जाए।

● अनुप्रिया देवताले

दुर्लभ बंदिशें

दुर्लभ बंदिशें वास्तव में वे बंदिशें हैं जो कभी पर्याप्त मात्रा में थी, जिनका उपयोग गायक सामान्य रूप से करते रहते थे। परन्तु समय ने ऐसी करवट ली कि उन बंदिशों का धीरे-धीरे अभाव होता गया और आज वे दुर्लभ श्रेणी में आ गई। चूँकि दुर्लभ है इसलिए उनकी सुरक्षा भी आवश्यक है जिससे उनका अस्तित्व बना रहे। अन्यथा विष्णु-पद, प्रबंध के समान समाप्त होने की सम्भावना है। वर्तमान समय में विष्णु पद, प्रबंध, वस्तु रूपक आदि बंदिशों के नाम ही शेष है। कभी-कभी साहित्य के रूप में मिलते हैं। वास्तव में उनका प्रायोगिक रूप समाप्त हो गया है। ऐसी बंदिशों की मात्र कल्पना ही की जा सकती है। उनका प्रायोगिक पक्ष उपलब्ध नहीं है। मात्र छन्द या पद से उसकी स्वरसंगति या रागरूप के गठन की जानकारी असम्भव है। अत: वह शैली, बंदिशें हमारी अज्ञानता, कृपणता या अन्य कारणों से कालकवलित हो गई।

ऐसी ही स्थिति आज त्रिवट, चतुरंग, रास आदि बंदिशों की है। इन बंदिशों के गायन से कभी महफिल सम्पन्न होती थी, वे बंदिशें ही आज दुर्लभ हो गई हैं। इन बंदिशों की मात्र परिभाषा ही उपलब्ध है या गिनी चुनी दो-चार बंदिशें मिल जाती हैं, जिससे उनके साधारण रूप का बोध हो जाता है। परन्तु उनकी विशेषता एवं विलक्षणता का आभास तक नहीं होता।

समय-समय पर कुछ ऐसे जागरूक गुणीजन भी हुए जिन्होंने अपने दायित्व का भलीभाँति निर्वाह किया है एवं इन बंदिशों को प्रायोगिक एवं सैद्धान्तिक रूप से सुरक्षित रखने का प्रयास किया, मेरी दृष्टि से इन गुणीजनों के दो वर्ग थे।

प्रथम वर्ग में वे गुणीजन हैं, जिन्होंने प्रायोगिक स्तर पर इन बंदिशों का बिना भेदभाव के प्रशिक्षण दिया जिन्हें रुचि थी उन्होंने सीखा और कभी-कभी प्रदर्शन भी किया। द्वितीय वर्ग में वे गुणीजन हैं जिन्होंने इन बंदिशों को स्वरलिपि सहित लिखकर सुरक्षा प्रदान की। संगीत जगत में सदियों से एक अघोषित संगीत परिपाटी चली आ रही है जिसमें संगीत शिक्षा प्रदान करने की विशेष क्रिया दिखाई देती है। उस क्रिया से यह स्पष्ट होता है कि संगीत शिक्षा किसे देना कितने प्रमाण में देना और कौन-सी देना, इस सन्दर्भ में तीन प्रकार की संगीत शिक्षा का उल्लेख मिलता है। पहली, साधारण संगीत शिक्षा अर्थात् वे शिष्य जो अपना संगीत शौक पूरा करने के उद्देश्य से संगीत सीखना चाहते थे, उन्हें साधारण संगीत शिक्षा दी जाती थी। दूसरी, विशेष संगीत शिक्षा अर्थात् वे शिष्य जो संगीत में विशेष रुचि लेते थे उन्हें विशेष संगीत शिक्षा दी जाती थी। तीसरी, खासउलखास संगीत शिक्षा अर्थात् वे शिष्य जो परिवार के खास सदस्य होते थे उन्हें दी जाती थी। इसमें भी दो वर्ग थे-

प्रथम वर्ग था खून के रिश्ते का अर्थात् पुत्र, भाई, पौत्र आदि। दूसरे वर्ग में- जामाता (जमाई) अर्थात् लड़की पक्ष, बहिन पक्ष आदि। अर्थात् संगीत शिक्षा प्रदान करने की एक परिपाटी निर्धारित थी जिसका अनुसरण छोटे-बड़े सभी संगीतकार करते थे। परिणामस्वरूप संगीत शिक्षा सीमित होती गई और घटती गई। अपनी इस परिपाटी को पुष्ट करने के लिए संगीतकार कहते थे कि 'बेटी और विद्या सुपात्र को देनी चाहिए' इसके विपरीत भी एक कहावत है-

सरसुति (सरस्वती) के भण्डार में बड़ी अपूरब बात।
ज्यों खर्चे त्यों-त्यों बढ़े बिन खर्चे घट जात।।

अर्थात् गुणीजनों ने संगीत शिक्षा का खर्च कृपणता से किया इस कारण संगीत के भण्डार में कमी आती गई। यदि उदार मन से संगीत शिक्षा खर्च करते (सिखाते) तो यह दुर्लभ स्थिति निर्मित नहीं होती।

दूसरे वर्ग के गुणीजनों ने अपनी सूझ-बूझ का परिचय देते हुए बंदिशों को स्वरलिपि में लिखकर उन्हें सुरक्षा प्रदान की। फिर भी अधिकतम बंदिशें गुणीजनों के साथ ही चली गई। अतः लिखित रूप में जो बंदिशें हैं वे दुर्लभ हैं। इन बंदिशों की विशेषता यही है कि ध्रुपद-धमार के समान इनमें चार चरण (स्थाई अंतरा, संचारी और आभोग) हैं। साधारणतः धारणा है कि ध्रुपद-धमार में चार चरण होते हैं अन्य में नहीं। दुर्लभ बंदिशों में चार चरण होने का अर्थ है कि इनके रचयिता ध्रुपद गायक थे। चार चरण से कम की बंदिशों को मुंडी रचना की संज्ञा दी जाती थी। इससे यह प्रमाणित होता है कि ध्रुपद-धमार के समान अन्य बंदिशों में भी चार चरण की प्रथा थी जिनमें त्रिवट, चतुरंग, रास, सरगम त्रिवट आदि बंदिशें हैं। अतः अधिकतम बंदिशों (त्रिवट, चतुरंग, रास) में चार चरण हैं। इसके साथ ही यह भी प्रमाणित होता है कि इन बंदिशों को ध्रुपद गायक ही गाते थे। जहाँ तक तरानों का प्रश्न है तराने लमछड़ ही मिलते हैं जिससे यह अनुमान होता है कि ये भले ही दो चरण के हैं परन्तु लमछड़ हैं जिनमें पखावज के बोल एवं सरगम भी समाहित है। इस कारण चार चरण की पूर्ति स्वतः हो जाती है।

सामान्यतः चतुरंग में चार अंग होते हैं- शब्द, तराने के बोल, सरगम एवं पखावज के बोल, तभी उस बंदिश को 'चतुरंग' की संज्ञा दी जाती है। किसी चतुरंग में दो ही चरण होते हैं परन्तु शब्द तराने के बोल, सरगम एवं पखावज के बोल ये तत्त्व अनिवार्य रूप से समाहित रहते हैं।

त्रिवट में केवल पखावज के बोलों का गठन होता है जिन्हें राग ताल में गठन करके बंदिश रूप दिया जाता है। त्रिवट में कहीं-कहीं सरगम भी मिलती है। इन बंदिशों का चलन तत्कालीन ग्वालियर में भलीभाँति था। चूँकि वह समय ध्रुपद एवं ख्याल के संक्रमण का था इसलिए इनका चलन था। शनैः-शनैः ध्रुपद-धमार गायकों की उपेक्षा बढ़ती गई, ध्रुपद शैली ही ग्वालियर से समाप्त हो गई। नई पीढ़ी में ख्याल गायन का प्रचार-प्रसार हर स्तर पर होने लगा। ध्रुपद-धमार की शिक्षा के स्थान पर ख्याल गायन की शिक्षा दी जाने लगी जिसे तत्कालीन शासन भी प्रोत्साहन देता था। ध्रुपद गायक चाहते हुए भी अपनी शिक्षा नई पीढ़ी को देने में असमर्थ रहे। शनैः शनैः इन गायकों की पीढ़ी भी समाप्त हो गई। अत्यंत खेद के साथ कहना पड़ रहा है कि जिस ग्वालियर में नायक बैजू, नायक बक्शू, मेहमूद लोहंग, नायक धोंडू जैसे उच्च कोटि के ध्रुपद गायक थे जिनके संरक्षण में ध्रुपद का विकास, विस्तार, प्रचार आदि हुआ, जिसमें तानसेन जैसे गायक संगीत जगत को दिये, जिन्हें शहंशाह अकबर ने अपने नौ रत्नों में सम्मान दिया, उनका नाम आज भी बड़े आदरपूर्वक लिया जाता है। उन्हीं की परम्परा आज भी बदस्तूर चली आ रही है। उस परम्परा की इतिश्री ग्वालियर में ही हुई, यह कहने में कोई संकोच नहीं है।

आगे चलकर ऐसा समय भी आया जब अच्छे-अच्छे ख्याल गायक ध्रुपद परम्परा से स्वयं को जोड़कर गौरव महसूस करने लगे। साथ ही त्रिवट, चतुरंग, रास आदि बंदिशें भी ख्याल के साथ गाने लगे। परन्तु ये बंदिशें प्रचुर मात्रा में न होने के कारण उनका गायन भी सीमित हो गया। वर्तमान में उपरोक्त बंदिशों की गायन शैली तो है ही नहीं। अर्थात् इन बंदिशों की भी एक गायन शैली थी जिसका लगभग लोप हो गया है। फिर भी इन दुर्लभ बंदिशों को संरक्षण प्रदान करने का हम सभी का दायित्व है। यह समृद्ध परम्परा भावी पीढ़ी का मार्गदर्शन करेगी।

● सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग'

अहमद हुसैन - मोहम्मद हुसैन- सूफी ग़ज़ल

जयपुर घराने के उस्ताद अहमद हुसैन-उस्ताद मोहम्मद हुसैन (हुसैन बन्धुओं) का जन्म 3 फरवरी 1951 व 2 दिसम्बर 1953 में जयपुर में हुआ। आपके पिता स्व. उस्ताद अफजल हुसैन जो अपने समय के बेजोड़ उस्ताद संगीतज्ञों में से थे जिन्होंने अपने इन दोनों पुत्रों की 1958 में संगीत शिक्षा प्रारम्भ की और 1959 में बतौर बाल कलाकार इनका पहला प्रोग्राम आकाशवाणी जयपुर से हुआ। आप आकाशवाणी के टॉप ग्रेड के कलाकार हैं, आकाशवाणी-दूरदर्शन के स्टेज प्रोग्रामों के माध्यम से आपको विश्वभर में देखा-सुना जाता है। आपने भजन श्रृद्धा, नातियाकलाम, शबद कीर्तन गाकर कौमी एकता का प्रमाण दिया। तमाम कमर्शियल कम्पनीज़ व अन्य कम्पनी द्वारा आपके 80 एलबम मार्केट में है। अपने बुजुर्गों की तरह गुरु-शिष्य परम्परा को जारी रख कई शागिर्द तैयार किए हैं। कई सीरियलों में बतौर गायक संगीत निर्देशक व निर्णायक के रूप में एम.ए.वी. आकाशवाणी दिल्ली, जी.टी.वी., सारेगामा, आदाब अर्ज है (सोनी टी.वी.) ई-टी.वी.-उर्दु-गज़ल सरा व यूनिवर्सिटी में सेवाएँ दी हैं। कई संस्थाओं ने आपकी सराहनीय संगीत सेवाओं को ध्यान में रखते हुए आपको सम्मानित किया व उपाधियाँ दी। आप शहंशाह-ए-गज़ल, गज़ल सम्राट, भजन सम्राट, रूह-ए-गज़ल, शान-ए-मोसिकी तथा गुणीजन की उपाधि से सम्मानित हैं।

मंजू मेहता-सितार (सम्मानित)

1945 में जन्मी विदुषी मंजू मेहता जयपुर के ख्यातिलब्ध सांगीतिक परिवार से हैं एवं आप सुप्रसिद्ध महिला सितार वादिका हैं। सितार वादन की प्रारंभिक शिक्षा बड़े भ्राता शशि मोहन भट्ट से ग्रहण की। प्रख्यात सितार वादक पण्डित रविशंकर की वरिष्ठ शिष्या मंजू ने संगीत में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की है। भारत सरकार एवं राज्य सरकार से छात्रवृत्ति तथा आकाशवाणी की प्रतिभाखोज प्रतिस्पर्धा में आपको पुरस्कार प्राप्त हुआ। संगीत की गहन शिक्षा पण्डित दामोदर लाल काबरा के सानिध्य में हुई। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन की नियमित वरिष्ठ कलाकार हैं। देश एवं विदेश में आयोजित अनेक संगीत समारोहों में आपने शिरकत की हैं। गुजरात संगीत नाटक अकादमी के प्रतिष्ठित गौरव पुरस्कार पण्डित ओंमकारनाथ पुरस्कार, संगीत मार्तण्ड सम्मान, संगीत कला रत्न, ताना री री सहित अनेक पुरस्कार और सम्मान आपको प्राप्त हुए हैं। आपकी प्रस्तुतियाँ निरन्तर सराही गई हैं।

ऋत्विक सान्याल - ध्रुपद गायन

उत्तर भारतीय शास्त्रीय गायन के ध्रुपद शैली के अग्रणी गायक पंडित ऋत्विक सान्याल का जन्म कटिहार में हुआ। आपने डागर परंपरा की ध्रुपद शैली गायन कला का प्रशिक्षण प्राप्त किया एवं बारह वर्ष तक ध्रुपद की शिक्षा उस्ताद ज़िया मोहिउद्दीन डागर एवं उस्ताद ज़िया फरीदुद्दीन डागर से ग्रहण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मुंबई विश्वविद्यालय से एम.ए. फिलॉसफि, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से संगीत के स्नातकोत्तर (गोल्ड मेडलिस्ट) तथा म्यूज़िकोलोजी में पी. एच.डी., पंडित सान्याल एक उत्कृष्ट ध्रुपद गायक, गुरु, लेखक, प्राध्यापक तथा शिक्षक हैं। आपने डागरवानी परंपरा की ध्रुपद शैली को आत्मसात् किया एवं ध्रुपद गायन में अपनी स्वयं की विशेष शैली विकसित की । आलाप, जोड़, झाला, लयकारी आदि की उन्नत तकनीकी पर आपको विशेषज्ञता प्राप्त है। आल इंडिया रेडियो के उच्च श्रेणी के कलाकार पण्डित सान्याल ने देश एवं विदेशों में आयोजित संगीत समारोहों में शिरकत कर संगीत प्रेमियों का मन मोहा है। संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार, नई दिल्ली एवं अन्य सम्मानों से सम्मानित पंडित सान्याल की पुस्तकें फिलॉसफि ऑफ म्यूज़िक-मुंबई 1987, ध्रुपद: ट्रेडीशन एंड परफार्मेंस इन इंडियन म्यूज़िक- यू.के.- 2004 प्रकाशित हैं। पंडित सान्याल वर्तमान में बनारस विश्वविद्यालय में वोकल म्यूज़िक के प्रोफेसर पद पर पदस्थ हैं।

रितेश-रजनीश मिश्र- गायन

पंडित रितेश मिश्र एवं पंडित रजनीश मिश्र ने अपने पिता 'बनारस घराना' के 'सूर्य एवं चन्द्रमा' ख्यातिलब्ध पद्मभूषण पंडित राजन मिश्र एवं चाचा पंडित साजन मिश्र के मार्गदर्शन में हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की इस कला में कठोर साधना के बल पर उत्कृष्टता प्राप्त की। महान संगीतज्ञों की छठवीं पीढ़ी के प्रीतिनिधि यह कलाकार बन्धु मधुरवाणी के धनी होने के साथ-साथ संगीत के सुरों में महारत रखते हैं। हिन्दुस्तानी राग के ज्ञान में पारंगत, दोनों ने देश एवं विदेशों में आयोजित संगीत कार्यक्रमों में अपनी कला का प्रदर्शन कर कला जगत को मोहित किया है। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के उच्च श्रेणी के इन कलाकार बंधुओं ने 'राइज़' नामक एल्बम के तीसरे ट्रेक 'महादेवा' को गाया है जिसको सुप्रसिद्ध ग्रेम्मी अवाईस के लिए नामित किया गया था। आप दोनों 'युवा रत्न पुरस्कार', 'भविष्य ज्योति पुरस्कार', 'संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार' एवं 'संगीत समृद्धि पुरस्कार' से पुरस्कृत हैं।

यखलेश बघेल - गायन

1992 में ग्वालियर में जन्मीं यखलेश ने संगीत की आरम्भिक शिक्षा श्रीमती रेखा शर्मा से प्राप्त की। कोविद् एवं एम.ए. की उपाधि प्राप्त यखलेश ने गुरु-शिष्य परम्परा के अंतर्गत ध्रुपद की शिक्षा अभिजीत सुखदाणे के मार्गदर्शन में प्राप्त की। ध्रुपद कलारत्न में 'ए' ग्रेड यखलेश बघेल ध्रुपद-धमार प्रतियोगिता में विशेष पुरुस्कार से पुरस्कृत हैं। अनेक प्रतिष्ठित कार्यक्रमों में एकल व जुगलबंदी प्रस्तुतियाँ आपने दी हैं, जिनमें ध्रुपद मेला वाराणसी, तानसेन समारोह, आई.टी.एम. संगीत समारोह, उत्तराधिकार भोपाल एवं सिंहस्थ महाकुम्भ 2016 आदि प्रमुख हैं। वर्तमान में आप गुरु से उच्च स्तरीय प्रशिक्षण प्राप्त करने के साथ-साथ राजा मानसिंह तोमर संगीत एवं कला विश्वविद्यालय में संचालित ध्रुपद केन्द्र में विद्यार्थियों को प्रशिक्षण दे रही हैं।

विपुल कुमार राय -संतूर

कश्मीर के सूफिया घराने के प्रसिद्ध पंडित भजन सोपोरी के शिष्य विपुल कुमार की गिनती देश के बहतरीन संतूर कलाकारों में होती है। शास्त्रीय गायन में स्नातकोत्तर, एम. फिल. डिग्री प्राप्त विपुल दिल्ली विश्वविद्यालय से वर्तमान में संतूर पर पी.एच.डी. कर रहे हैं। आपने देश के अनेकों प्रतिष्ठित संगीत उत्सवों एवं मंचों पर अपनी कला का जादू बिखेरा है। आपका गायन विशेषकर राग की पवित्रता एवं सौंदर्यबोध दृष्टिकोण दर्शाता है। मंत्रमुग्ध कर देने वाली 'लयकारी', मधुर आलाप एवं तंत्रकारी, ध्वनि पर उत्तम नियंत्रण एवं कुशल संतूर वादन आपकी गायन कला के विशिष्ट अंग हैं। आकाशवाणी के 'ए' श्रेणी के कलाकार, आई.सी.सी.आर. के सूचीबद्ध कलाकार, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा छात्रवृत्ति से सम्मानित विपुल को बिहार कला पुरस्कार-2013 एवं अन्य पुरस्कारों से विभूषित किया गया। वर्तमान में आप म्यूजिक एण्ड फाइन आर्ट्स संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय में संतूर प्रशिक्षक के रूप में कार्यरत हैं एवं साहित्य कला अकादमी, दिल्ली शासन में संगीत कार्यशाला के निदेशक पद पर अपनी सेवाएँ दे रहे हैं।

निर्भय सक्सेना - गायन

सांगीतिक परिवार में 1994 में जन्में निर्भय सक्सेना ने बाल्यावस्था से ही अपने पिता राधेश्याम सक्सेना से संगीत की शिक्षा प्राप्त की। तदुपरांत शास्त्रीय गायन में सात वर्ष का प्रशिक्षण श्री उमेश कम्पूवाले के सानिध्य में ग्रहण किया। प्रभाकर गोहदकर से संगीत में मार्गदर्शन तथा श्री ओमकार दादरकर से प्रशिक्षण प्राप्त करने का भी आपको अवसर मिला। संगीत में स्नातकोत्तर निर्भय वर्तमान में आई.टी.सी.-एस.आर.ए. में वरिष्ठ स्कालर हैं एवं पारंपरिक गुरु-शिष्य परम्परा के अन्तर्गत पद्मश्री पंडित उल्हास काशलकर से प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। गुरु उल्हास काशलकर जी की सलाह पर बनारस घराना के सुप्रसिद्ध पद्म विभूषण विदुषी गिरिजा देवी से ठुमरी, दादरा एवं टप्पा के पूरब अंग गायिकी की शिक्षा ग्रहण की। कला साधक सम्मान, बाल श्री पुरस्कार से सम्मानित निर्भय को संस्कृति मंत्रालय से छात्रवृत्ति प्राप्त हुई है। आपने अनेक सांगीतिक समारोहों में सहभागिता की है।

दीपक क्षीरसागर- मोहनवीणा

क्षीरसागर परिवार की चौथी पीढ़ी के प्रतिनिधि दीपक क्षीरसागर ने ग्वालियर शैली की 'विशुद्ध' प्रस्तुति से चार वर्ष की उम्र से ही कला प्रेमियों को मंत्रमुग्ध करना आरम्भ किया। अपने दादा ग्वालियर घराने के प्रसिद्ध गायक पंडित बी.एन. क्षीरसागर के मार्गदर्शन में संगीत क्षेत्र में ठोस नींव स्थापित करने को अग्रसर हुए। दीपक ने हिंदुस्तानी शास्त्रीय गिटार के वरिष्ठ कलाकारों पंडित विश्व मोहन भट्ट तथा श्री सतीश खानवलकर के संग भी कुछ समय बिताया। उत्कृष्ट शास्त्रीय संगीत बनाने की प्रबल इच्छा ने आपको अपने वादन तकनीक में कई सारे बदलाव लाने को प्रेरित किया इसके फलस्वरूप आपको हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बनाने का अवसर मिला। आल इंडिया रेडियो एवं दूरदर्शन के 'ए' श्रेणी के कलाकार, दीपक को फेलोशिप सहित अनेक राष्ट्रीय एवं राज्य पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। आपकी संगीत प्रस्तुतियाँ कला जगत द्वारा सराही गयी हैं।

बेहदाद बाबई, अर्देशिर कामकार, ईरान - सहतार, ख़मांचे - जुगलबंदी (विश्व संगीत)

बेहदाद बाबई का जन्म नेशाबौर ईरान में हुआ। आपने सात वर्ष की अल्पायु से सितार का प्रशिक्षण मूर्धन्य संगीतज्ञ चाचा परविज़ मेस्कशियन से प्राप्त किया। रेडिफ्स ऑफ परशियन क्लासिकल म्यूज़िक डेरिशोह पिरनिक्येन से तथा म्युज़िक थ्योरी एण्ड सोल्फेगी मोहम्मद रेज़ा दरविशी से सीखी। परशियन गायन संगीत की बारीकियों का गहन अध्ययन मूर्धन्य संगीतज्ञ उस्ताद मोहम्मद रेज़ा शजारियन के सानिध्य में किया।

कुर्दिश म्युज़िशियन अर्देशिर कामकार का जन्म 1962 में सनन्दाज़-ईरान में हुआ। पिता उस्ताद हसन कामकार के मार्गदर्शन में संगीत का प्रशिक्षण प्राप्त किया। 1980 में तेहरान आकर मोहम्मद रेज़ा लोत्फी और भाई पाशंग की देख-रेख में पारम्परिक अध्ययन किया। अनेक पुस्तकें लिखीं। एलबम दास्तांन जारी। मूर्धन्य संगीतकारों के साथ प्रस्तुतियाँ भी दी हैं।

वैशाली देशमुख - गायन

अत्यन्त प्रतिभावान एवं प्रवीण गायक कलाकार डॉ. वैशाली देशमुख हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत 'ग्वालियर घराना' का प्रतिनिधित्व करती हैं। संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा अकोला की श्रीमती कलाताई घाटे के मार्गदर्शन में हुई। इसके उपरान्त आपने 'ग्वालियर घराना' की गुरु डॉ. वीणा सहस्त्रबुद्धे से गुरु-शिष्य परंपरा के अंतर्गत तालीम हासिल की। आपको गानसरस्वती किशोरीताई अमोनकर से भी तालीम प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हुआ। स्वर माधुर्य, कल्पनाशीलता, एवं शास्त्रीय शुद्धता डॉ. वैशाली के गायन की विशेषता है। अमरावती विश्वविद्यालय से संगीत में स्नातकोत्तर तथा संगीत में नागपुर विश्वविद्यालय से पी.एच.डी., डॉ. वैशाली ने देश एवं विदेश के विभिन्न कलामंचों पर मनमोहक प्रस्तुतियाँ देकर कला मर्मज्ञों से सराहना बटोरी है। सुरसिंगार संसद द्वारा सुरमणि पुरस्कार से सम्मानित डॉ. वैशाली वर्तमान में शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, औरंगाबाद में सहायक प्राध्यापक (म्यूज़िक) के पद पर पदस्थ हैं।

फारूख लतीफ खाँ - सारंगी

1975 में भोपाल में जन्में सारंगी वादक फारूख लतीफ खाँ युवा कलाकार हैं। गोहद ग्वालियर के सारंगी वादकों की पाँचवीं पीढ़ी के प्रतिनिधि फारूख प्रख्यात सारंगी नवाज एवं गुरु पद्मश्री उस्ताद अब्दुल लतीफ खाँ के पुत्र एवं शागिर्द हैं। संगीत और सारंगी आपको विरासत में मिले हैं। देश के लगभग सभी संगीत समारोहों में एकल एवं संगत का आपने कुशल प्रदर्शन किया है। सुर सिंगार संसद, मुम्बई द्वारा सुरमणि की उपाधि से विभूषित फारूख लतीफ खाँ वर्तमान में आकाशवाणी मुम्बई में सारंगी वादक के पद पर कार्यरत हैं।

रुचिरा केदार - गायन

बहुमुखी प्रतिभा की धनी रुचिरा केदार, संगीत के क्षेत्र में वर्ष 1993 से हैं। बारह वर्ष की आयु में पिता श्री दिलीप काले से संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की। संगीत के प्रति समर्पित रुचिरा ने जयपुर घराना की सुप्रसिद्ध गायिका श्रीमती अलका देव मारुलकर से हिंदुस्तानी शास्त्रीय एवं उपशास्त्रीय संगीत की बारीकियाँ सीखीं। वर्ष 2003 में आप प्रसिद्ध आई.टी.सी. संगीत रिसर्च अकादमी, कोलकाता से जुड़ी एवं ग्वालियर-जयपुर घराने के प्रतिष्ठित गायक पंडित उल्हास कशालकर से अमूल्य तालीम प्राप्त की। आपको बनारस घराने की वरिष्ठ एवं प्रसिद्ध गायिका श्रीमती गिरिजा देवी से भी ठुमरी, दादरा, होरी, कजरी आदि का महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्राप्त करने का सौभाग्य मिला। संगीत के प्रति अथाह प्रेम एवं प्रतिबद्धता के लिए रुचिरा को कई सम्मानों से सम्मानित किया गया। देश-विदेश के अनेक प्रतिष्ठित कला मंचों पर अपनी मनमोहक प्रस्तुतियाँ दे चुकी रुचिरा ने वर्ष 2002 में यू.एस.ए. एवं कनाडा में अपनी श्रेष्ठ गायन कला का प्रदर्शन किया तथा व्याख्यान-प्रदर्शन में भाग लिया।

कैलाश पवार - ध्रुपद गायन

पुष्टि मार्गीय मृदंगाचार्य पं. श्री चुन्नीलाल पवार के पुत्र एवं शिष्य कैलाश पवार का जन्म 1942 में इन्दौर में हुआ। संगीत प्रवीण (एम्यूज) सुरमणि, ध्रुपदश्री, ध्रुपद विभूषण, स्वामी हरिदास सम्मान से सम्मानित पवार आकाशवाणी व दूरदर्शन के प्रथम श्रेणी के कलाकार हैं। आपने देश एवं हॉलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, पेरिस, अमेरिका, रूस व यूरोप आदि में सांगीतिक प्रस्तुतियाँ दी हैं। वाग्येकार, विचारक, पुष्टिमार्गीय तथा प्राचार्य। आपने संगोष्ठियों में करीब 2000 ध्रुवपद धमार, स्व-रचित संगीत रचनाएँ दी हैं। ध्रुवपद टेलीफिल्म के निर्देशक-संगीतकार एवं पी.एच.डी. के सलाहकार रहे हैं। आपके साथ में बड़े भ्राता विश्व प्रसिद्ध पखावज वादक पंडित लक्ष्मीनारायण पवार ने संगत में एक विशेष स्थान दिलवाया। सौराष्ट्र में सोमनाथ मंदिर में सामगान (पवार बंधु के साथ प्रस्तुत किए) नाथद्वारा में स्वयं प्रभु के सामने ध्रुवपद व पुष्टि मार्गीय कीर्तनों की प्रस्तुतियाँ दी। आपने अनेक सांगीतिक आयोजनों को आयोजित भी किया है।

संतोष नाहर - वायोलिन

पारंपरिक सांगीतिक मिश्रा घराना (भागलपुर घराना) में वर्ष 1965 में जन्में डॉ. संतोष नाहर ने स्वयं को हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत जगत् में प्रमुख एवं उत्कृष्ट वायोलिन वादक के रूप में स्थापित किया है। सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ एवं गायक गुरु पिता स्वर्गीय प्रो. प्रह्लाद प्रसाद मिश्रा ने आपका वायोलिन से परिचय कराया। डॉ. नाहर ने चाचा स्वर्गीय पंडित केदार नाथ मिश्रा एवं स्वर्गीय पंडित राम नरेश मिश्रा से भी शिक्षा ग्रहण की। समय-समय पर ज्येष्ठ भ्राता पंडित संगीत नाहर तथा डॉ. साहित्य नाहर से भी मार्गदर्शन प्राप्त किया। आपने वायोलिन का तकनीकी एवं क्रियात्मक ज्ञान टी.एम. पटनायक से ग्रहण किया। आकाशवाणी के उच्च श्रेणी कलाकार डॉ. नाहर राग को मधुर संगीत के अनुपम मिश्रण, प्रवाह एवं विशुद्धता से प्रस्तुत करने के लिए जाने जाते हैं। अनेक सम्मान एवं पुरस्कार से सम्मानित, डॉ. नाहर ने देश एवं विदेश में आयोजित सांगीतिक समारोहों में अपनी कला का प्रदर्शन कर यश प्राप्त किया है।

मधुमिता नकवी - गायन

मधुमिता नकवी शास्त्रीय संगीत की प्रतिभाशाली एवं समर्पित गायिका हैं। बचपन से ही संगीत के प्रति लगाव रहा है जिसके कारण माता-पिता से भी प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। आपकी शास्त्रीय संगीत की तालीम ग्वालियर घराना, इप्जाख़नी घराना और किराना घराना में हुई। आपने खैरागढ़ विश्वविद्यालय से एम.ए. म्यूजिक शास्त्रीय गायन में किया है। मधुमिता गंधर्व विश्वविद्यालय से शास्त्रीय नृत्य शैली कथक में स्नातक उपाधि प्राप्त हैं। दूरदर्शन एवं आकाशवाणी की ए श्रेणी की कलाकार मधुमिता ने विद्यार्थियों को शास्त्रीय गायन का प्रशिक्षण दिया है। संगीत के प्रचार-प्रसार में आप संलग्न हैं। आपकी गायिकी एवं नृत्य नाटिकाओं की प्रस्तुति सराही गई हैं।।

सारंग सैफ़ीज़ादे, निलोफ़र मोहसनीन, निगाह जोहदीमुताल्पिपुर, नाज़नीन ग़नीजादे, ईरान - गायन, टुम्बक, संतूर, ख़मांचे (विश्व संगीत)

सारंग सैफ़ीज़ादे का जन्म तेहरान के सांगीतिक परिवार में हुआ। संगीत के प्रति बचपन से ही आपकी रुचि स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुई। ईरानी संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा दस वर्ष की उम्र में आपने फोर्फ़ मोयद्दाम, माँ मासुमहेह मेहरली और उनके पिता होसेन सेफिजादेह से प्राप्त की। आपने ईरान, स्वीडन, इटली, डेनमार्क, रूस आदि प्रमुख देशों में सांगीतिक प्रस्तुतियाँ दी हैं। फिल्म संगीत भी आपने दिया है। तानसेन समारोह 2018 में संगीत की प्रस्तुति में निगाह जोहदी संतूर पर, नाज़नीन ग़नीजादे कामेश पर और निलोफ़र मोहसनीन टुम्बक पर आपके साथ हैं।

अर्सेन पेट्रोजियान, शॉक गैस्प्रियान, एविटिस केयोसियान- आर्मीनिया (विश्व संगीत)

अर्सेन पेट्रोजियान, आर्मीनिया के युवा डुडुक वादक कलाकार हैं। आपने डुडुक वादन की शिक्षा गेवोर्ग डबघ्यान से प्राप्त की। प्रारम्भिक शिक्षा 6 वर्ष की आयु में गुरु क्रिकोर खश्त्रयान के सानिध्य में आरंभ की। कोमीतास स्टेट कन्जर्वेट्री ऑफ येरेवान से स्नातक अर्सेन ने युवावस्था से ही प्रदर्शन प्रारम्भ किए जिनमें यूनाइटेड स्टेट्स, रशिया, कनाडा, भारत, अबुधाबी, जर्मनी, स्पेन आदि देश प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

वर्ष 1990 में जन्में शॉक गैस्प्रियान भी डुडुक वादक हैं, आपने संगीत शिक्षा रोमनोस मेलिक्यान स्टेट म्यूज़िक कॉलेज से प्राप्त की है। आप संगीत शिक्षक के रूप में डुडुक शिक्षण का कार्य कर रहे हैं एवं आप आर्मीनियान पारंपरिक डुडुक वाद्य यंत्र भी बनाते हैं। शॉक ने आर्मीनिया के पारंपरिक नृत्य समूह के साथ यूरोप, रशिया, तुर्की, जार्जिया में प्रस्तुतियाँ दी हैं।

1993 में जन्में येरेवान निवासी एविटिस केयोसियान परम्परागत तालवादक हैं। आपने संगीत शिक्षा रोमनोस मेलिक्यान स्टेट म्यूज़िक कॉलेज से प्राप्त की है। आप तालवादक शिक्षक के रूप में संगीत विद्यालय में शिक्षा प्रदान कर रहे हैं एवं आर्मीनिया पारंपरिक संगीत के दो समूहों के संग कार्य कर रहे हैं। आपने रशिया, जार्जिया, तुर्की, तुर्कमेनिस्तान, भारत तथा लेबनॉन में अपनी संगीत कला का प्रदर्शन किया है।

मोवना रामचन्द्र - गायन

युवा पीढ़ी की शास्त्रीय गायिका मोवना ने संगीत प्रशिक्षण धारवाड़ के स्वर्गीय पंडित अर्जुनसानकोड के मार्गदर्शन में प्राप्त किया। श्रीमती वीना सहस्त्रबुद्धे के सानिध्य में बारह वर्षों तक आपने ग्वालियर घराने की गायिकी की बारीकियाँ सीखीं। आकाशवाणी की 'बी' श्रेणी एवं आई.सी.सी.आर. की सूचीबद्ध कलाकार मोवना सुर सिंगार संसद द्वारा सुरमणि पुरस्कार से सम्मानित तथा एनसीपीए से केसरबाई केरकर छात्रवृत्ति प्राप्त हैं। देश एवं विदेश के अनेक कला मंचों पर आपने अपनी कला का जादू बिखेरा है। आपके गायन में गुरु श्रीमती वीना सहस्त्रबुद्धे की शैली परिलक्षित होती है। संगीत जगत में मधुर वाणी तथा तान पर गहन समझ के कारण आपको विशिष्ट स्थान प्राप्त है। मोवना ने हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के विस्तार के लिए अनेक योजनाओं में प्रमुखता से अपना योगदान भी दिया है।

कमला शंकर - गिटार

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय गिटार वादिका कमला शंकर पहली महिला संगीतकार हैं और इन्होंने शंकर गिटार विषय पर डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की है। तमिलनाडु के तंजौर जिले में जन्मी कमला शंकर ने संगीत की प्रारंभिक शिक्षा अपनी माता से प्राप्त की। बनारस के मूर्धन्य संगीतज्ञ पण्डित छन्नूलाल मिश्र तथा इमदादखानी घराने के सितार वादक विमलेन्दु मुखर्जी से आपको मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। गायिकी अंग और तंत्रकारी अंग के कलात्मक समन्वय से उन्होंने अपनी एक विशिष्ट वादन शैली आविष्कृत की है जिससे वे बिना अतिरिक्त तार बढ़ाए हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के अपने संगीत कोष को पूर्ण समग्रता के साथ प्रस्तुत कर सके। आकाशवाणी और दूरदर्शन के नियमित प्रसारण के अतिरिक्त आप समय-समय पर देश के विभिन्न कला केन्द्रों में वादन कार्यक्रम प्रस्तुत करती रही हैं। न्यूयार्क, टेक्सास और लंदन में भी संगीत प्रदर्शन कर चुकी हैं। सुर सिंगार संसद बम्बई से सुरमणि की उपाधि से सम्मानित हैं। आपका सी.डी. एलबम जारी हुआ है।

राम देशपाण्डे - गायन

पण्डित राम देशपाण्डे संगीत परम्परा से समृद्ध तथा समकालीन प्रसिद्ध गायक हैं। संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा आपको श्री चेपे, श्री पानके और श्री प्रभाकर देशकर से प्राप्त हुई। ग्वालियर और जयपुर घराने की पारम्परिक गायिकी का गहन एवं उच्च प्रशिक्षण विख्यात गायक पण्डित यशवंत बुआ जोशी और पण्डित उल्हास कशालकर के सुयोग्य मार्गदर्शन में, आगरा घराने का प्रशिक्षण सुप्रसिद्ध गायक पण्डित बब्बनराव हल्दनकर तथा भातखण्डे परम्परा पण्डित यशवंत महाले से प्राप्त हुई। संगीत में स्नातकोत्तर उपाधि नागपुर विश्वविद्यालय से स्वर्ण पदक के साथ तथा संगीत में मिश्र राग के लिए शोध उपाधि पण्डित वी.आर. अठवले के सुयोग्य मार्गदर्शन में प्राप्त की। गायन में गमक और मीड़ की दक्षता से प्रदर्शन। बेस्ट वोकलिस्ट अवार्ड, विद्यासागर अवार्ड, आदित्य विक्रम बिड़ला कलाकिरण पुरस्कार से पुरस्कृत तथा भारत सरकार की राष्ट्रीय छात्रवृत्ति आपको प्राप्त हुई। आकाशवाणी-दूरदर्शन के 'ए-ग्रेड' के कलाकार। अनेक कैसेट्स और सी.डी. जारी। देश के विभिन्न प्रतिष्ठित मंचों पर सफल गायन प्रस्तुतियों के अलावा हॉलैण्ड, जर्मनी, दुबई-मस्कट की सांगीतिक यात्रा। संगीत निर्देशन एवं गंधार म्यूज़िक अकादेमी में शास्त्रीय संगीत का प्रशिक्षण प्रदान कर रहे हैं।

गौतम काले - गायन

सांगीतिक परिवार में जन्में गौतम काले ने संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा अपने माता-पिता से प्राप्त की। श्रीमती कुंदा जोशी एवं मालवा के प्रसिद्ध शास्त्रीय संगीत गायक पंडित वी. जी. रिंगे 'तनरंग' के सानिध्य में प्रशिक्षण प्राप्त किया। सुप्रसिद्ध पंडित जसराज की गायिकी शैली से प्रभावित गौतम को पंडित जी तथा गुरु कल्पना झोकरकर के मार्गदर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आपकी प्रस्तुतियों में पंडित जसराज की भावपूर्ण गायिकी की स्पष्ट झलक दिखाई पड़ती है। आप शास्त्रीय-उपशास्त्रीय एवं सुगम संगीत के निपुण कलाकार हैं। देश एवं विदेश में आयोजित अनेक सांगीतिक समारोहों में आपने शिरकत की हैं। आपके म्यूज़िक एलबम जारी हुए हैं। आपको अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए हैं।

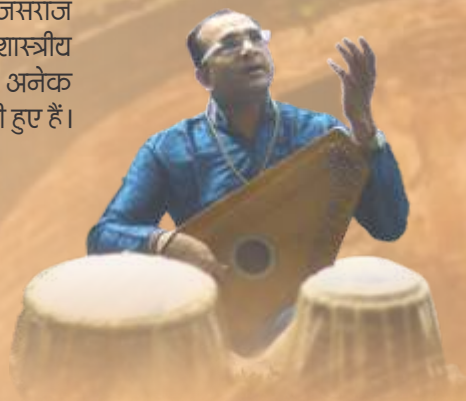

सौरवव्रत चक्रवर्ती - सुरबहार

सौरवव्रत चक्रवर्ती ने तेरह वर्ष की आयु से ही अपनी माता श्रीमती माला चक्रवर्ती के मार्गदर्शन में सितार वादन की शिक्षा ग्रहण करना आरंभ की। आपके नाना श्री रवीन्द्र लाल मुखर्जी भी एक प्रसिद्ध अनुभवी सितार एवं ख्याल के कलाकार थे। सौरवव्रत ने सितार पंडित मणिलाल नाग, कौशिक शील, डॉ. प्रदीप चक्रवर्ती, पंडित काशीनाथ मुखर्जी एवं सुरबहार की शिक्षा पंडित नेताई बोस, उस्ताद ज़िया फरीदुद्दीन डागर, उस्ताद बहाउद्दीन डागर के सानिध्य में प्राप्त की। सुरमणि सम्मान से सम्मानित सौरवव्रत ने देश के विभिन्न प्रतिष्ठित कला मंचों पर मनमोहक प्रस्तुतियाँ दी हैं। जर्मनी एवं लक्ज़म्बर्ग में सितार एवं सुरबहार की आपकी अनेक प्रस्तुतियाँ हुई हैं। सुरबहार पर शोध कार्य के लिए आपको जूनियर फेलोशिप प्राप्त हुई है। पंडित अजय चक्रवर्ती, पंडित बालामुरली कृष्णन, उस्ताद अमजद अली खाँ, उस्ताद वासिफुद्दीन डागर, सईदुद्दीन डागर तथा पद्मश्री गुंदेचा बंधुओं के साथ भी आपने प्रस्तुतियाँ दी हैं।

ज्योति फगरे अय्यर - गायन

प्रतिभाशाली गायक कलाकार डॉ. ज्योति अय्यर, हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के ग्वालियर घराने का प्रतिनिधित्व करती हैं। संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा माँ स्व. श्रीमती सरोजिनी फगरे से ग्रहण की एवं गुरु-शिष्य परम्परा के तहत् ग्वालियर के पंडित बालासाहेब पूंछवाले के शिष्य सुप्रसिद्ध पंडित सज्जनलाल भट्ट से प्रशिक्षण प्राप्त किया। आपको गानसरस्वती किशोरी अमोनकर, बांसुरी वादक स्व. पंडित रघुनाथ सेठ से भी संगीत विद्या में मार्गदर्शन प्राप्त करने के सौभाग्य प्राप्त हुआ। डॉ. ज्योति वर्तमान में पंडित रघुनन्दन पणशीकर, ठुमरी क्वीन स्व. शोभा गुर्टू की शिष्या श्रीमती शुभा जोशी से शिक्षा तथा वरिष्ठ तबला गुरु पंडित बालकृष्ण अय्यर से मार्गदर्शन प्राप्त कर रही हैं। मधुरवाणी की धनी डॉ. ज्योति ने 'द ऑरिजिन ऑफ टप्पा' विषय पर शोध किया है तथा भोपाल विश्वविद्यालय से डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की है। भारत के अनेक प्रतिष्ठित कला मंचों पर अपनी कला का मनमोहक प्रदर्शन कर चुकी है एवं आपने श्रीलंका में 'फेस्टिवल ऑफ इंडिया' में भी भाग लिया है।

निसार हुसैन खाँ - तबला

अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त तबला वादक उस्ताद निसार हुसैन खाँ का जन्म सांगीतिक परिवार में हुआ। आपने तबले की शिक्षा अपने पिता, अजराडा घराने के वरिष्ठ तबला वादक स्व. उस्ताद काले खाँ एवं अपने बड़े ताऊ मोहम्मद शफी खान साहिब से प्राप्त की। आप आकाशवाणी के टॉप ग्रेड तबला वादक एवं मांड गायिकी में ए श्रेणी के गायक हैं। ठुमरी, दादरा व ग़ज़ल गायिकी में भी आप दक्ष हैं। आकर्षक शैली जटिल तकनीक, समृद्ध स्वर और सम्पूर्ण परिपक्वता से गुंजायमान सुरीली तालों के लिए भी प्रसिद्ध हैं। निसार हुसैन खान ने प्रशंसा, हर्षध्वनि एवं पुरस्कार प्राप्त करते हुए भारत एवं अन्य देशों में अपने कार्यक्रम प्रस्तुत किए हैं। आपको न्यूयार्क, यू.एस.ए. की संस्था साज़ और आवाज़ द्वारा सम्मानित किया गया। आपको हिन्दुस्तान के वरिष्ठ गायक, वादक व नृत्य कलाकारों के साथ संगत का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

द्यानेश्वर देशमुख - पखावज

1987 में जन्में द्यानेश्वर देशमुख पखावज वादक हैं। आप वरकारी संप्रदाय से संबंध रखते हैं। पखावज की आपके परिवार की परंपरा रही है। आपने 12 वर्षों तक वरकारी संप्रदाय के प्रसिद्ध कलाकार अपने पिता रंगनाथ महाराज देशमुख से शिक्षा प्राप्त की। ध्रुपद शैली के पखावज वादन से सुप्रसिद्ध गुरु पंडित अखिलेश गुंदेचा ने परिचय कराया। आपको श्री पाण्डुरंग अप्पा दातार से भी प्रशिक्षण प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हुआ। वर्तमान में आप गुरु-शिष्य परंपरा के तहत पंडित अखिलेश गुंदेचा एवं पदमश्री गुंदेचा बंधु के सानिध्य में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार की राष्ट्रीय छात्रवृत्ति से सम्मानित, द्यानेश्वर ने देश के कई प्रतिष्ठित कला मंचों से प्रस्तुतियाँ दी हैं। अनेक कलाकारों के साथ आपको संगत करने का अवसर भी प्राप्त हुआ है।

निल्गम अक्सॉय, माल्टे स्ट्वीक, जॉनेस क्रिस्टैन, बेनजामिन स्ट्वीक,जर्मनी-गायन, फ्रेम ड्रम, ल्यूट,(विश्व संगीत)

निल्गम अक्सॉय, माल्टे स्ट्वीक तथा बेंजामिन स्ट्वीक की मनमोहक प्रस्तुतियों की विशेषता कभी उदास, आध्यात्मिक गीत कभी काकेशिया, टर्की से लेकर यूरोप के प्राचीन क्षेत्र के उत्साहपूर्ण नृत्य हैं जो कि दर्शकों को पूर्वी मेडिटेरेनियन के मधुर संगीत, लय तथा काव्य के संसार में पूरी तरह तल्लीन कर देते हैं। निल्गम अक्सॉय का विशुद्ध स्वर-संगीत साथ में माल्टे एवं बेंजामिन स्ट्वीक बन्धु का बगलामा, कोपूज़ एवं कुरा तथा फ्रेम ड्रम्स पर संगीत, कला प्रेमियों को सम्मोहित होने को बाध्य कर देता है। टर्किश, आर्मीनिएन तथा कुर्दिश भाषा में भावात्मक पारम्परिक तथा वाद्य विषयक गीत के लिए नामवर इस तिकड़ी ने कई कला मंचों में अपनी कला का प्रदर्शन कर कला मर्मज्ञों से सराहना बटोरी है।

कशिश मित्तल - गायन

भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी कशिश मित्तल हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के स्थापित संगीतज्ञ हैं। आठ वर्ष की अल्पायु से आपने प्रोफेसर हरविंदर सिंह से हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण की। तदुपरान्त गुरु-शिष्य परंपरा के अंतर्गत आगरा घराने के पंडित यशपाल-चंडीगढ़ के सानिध्य में संगीत की बारीकियाँ सीखीं। शास्त्रीय संगीत के प्रति अत्यधिक लगाव से आपको देश के अनेक प्रतिष्ठित संगीत समारोहों में अपनी कला का जादू बिखेरने का अवसर प्राप्त हुआ। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के 'ए' श्रेणी के कलाकार कशिश मित्तल को कई पुरस्कार एवं सम्मानों से विभूषित किया गया जिसमे 'पंजाब राज्य पुरस्कार', 'नाद श्री सम्मान' एवं 'सरस्वती सम्मान' प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। सेंटर फार कल्चरल रिसोर्सेस एंड ट्रेनिंग से हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत में राष्ट्रीय छात्रवृत्ति प्राप्त कशिश मित्तल वर्तमान में नीति आयोग में पदस्थ हैं।

उस्ताद निशात खाँ - सितार

उस्ताद निशात खाँ का जन्म भारत के ख्यातिलब्ध सांगीतिक परिवार में हुआ। उस्ताद इमरत खाँ के पुत्र और शिष्य निशात खाँ ने सात वर्ष की उम्र से ही दर्शक-श्रोताओं को अपनी वादन प्रतिभा से प्रभावित करना शुरू किया। आप दर्शकों को अभिभूत करने वाली एक अनूठी कला प्रदर्शित करते हैं। सितार की समकालीन और विशिष्ट वादन कला पर मजबूत पकड़ आपकी सांगीतिक प्रतिभा का उदाहरण हैं। उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत के साथ-साथ आप पश्चिमी शास्त्रीय संगीत शैली में भी समान रूप से पारंगत हैं। आपने 'यह साली ज़िन्दगी' फिल्म के लिए महत्वपूर्ण सहयोग दिया। आप अनेक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के प्रतिष्ठित मंचों पर प्रस्तुतियाँ दे चुके हैं। यूनाईटेड नेशन एवं पेसेफिक एशिया म्युजियम लॉस एजेंल्स द्वारा आपको सम्मानित भी किया गया है। बीबीसी द्वारा लंदन में रायल अलबर्ट हाल एवं जापान सरकार द्वारा जापान संसद में आपकी प्रस्तुतियाँ हुई हैं। आपने इंटरनेशनल फिल्म फेस्टिवल में पं. बिरजू महाराज के साथ भी प्रस्तुति दी हैं।

अजय प्रसन्ना - बाँसुरी

सांगीतिक परिवार में जन्में अजय प्रसन्ना सुप्रसिद्ध बांसुरी वादक हैं। बांसुरी का प्रारम्भिक प्रशिक्षण पिता पंडित भोलानाथ प्रसन्ना (ग्वालियर घराना) से प्राप्त किया जो कि पंडित हरिप्रसाद चौरसिया के गुरु हैं। आकाशवाणी के उच्च श्रेणी के कलाकार अजय प्रसन्ना की प्रस्तुतियों में स्वर की असाधारण मधुरता, प्रवाह, परिपक्वता तथा कौशल स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। वायुधारा प्रवाह तकनीक में कुशल अजय उत्तर भारतीय शास्त्रीय बांसुरी की भावनापूर्ण साध्यता को उल्लेखनीय ढंग से प्रयोग करते रहे हैं। वर्ड फ्लूट फेस्टिवल-दिल्ली, क्लासिकल म्यूज़िक कन्सर्ट, रॉयल अल्बर्ट हाल-लंदन एवं देश विदेश के अनेक प्रतिष्ठित कला उत्सवों एवं मंचों पर मनमोहक बांसुरी वादन का प्रदर्शन दे चुके अजय ने प्रसिद्ध अंतर्राष्ट्रीय कलाकारों के संग प्रयोग किए हैं। एच.एम.वी. सा रे गा मा, टी-सीरिज़ तथा नवरस रिकॉर्ड, लंदन द्वारा आपके एलबम जारी किए गए हैं। प्रतिष्ठित म्यूज़िक कम्पनियों ने पंडित भोलानाथ प्रसन्ना द्वारा रचित विशेष रागों को प्रदर्शित करने के लिए आपको अनुबंधित किया गया है।

सलमान खान - सारंगी

ग्वालियर घराने के सांगीतिक परिवार में जन्में सलमान खान ने सारंगी की प्रारम्भिक शिक्षा सुप्रसिद्ध सारंगी वादक अपने दादा उस्ताद बशीर खान से प्राप्त की। वर्तमान में आकाशवाणी के ए ग्रेड सारंगी वादक अपने चाचा श्री अब्दुल मजीद खाँ एवं अब्दुल हमीद खाँ से प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। आपकी पहली प्रस्तुति आकाशवाणी जम्मू में हुई एवं इसके उपरान्त अनेक सांगीतिक समारोहों में आपने सारंगी वादन का जादू बिखेरा। भारत सरकार द्वारा संस्कृति मंत्रालय से सीनियर छात्रवृत्ति प्राप्त सलमान ने सारंगी वादन में संगीत प्रभाकर की उपाधि प्राप्त की। वर्तमान में शासकीय विजयाराजे कन्या महाविद्यालय में सारंगी संगतकार के रूप में कार्य कर रहे हैं। युवा उत्सव आदि में प्रथम पुरस्कार से आप पुरस्कृत हैं।

के. दामोदर राव - गायन

के. दामोदर राव हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के एक समर्पित एवं प्रतिभाशाली गायक हैं। आपने संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा पंडित सिद्धराम स्वामी कोरवार से ग्रहण की। गायन प्रतिभा को विश्व प्रसिद्ध बनारस घराना की कलाकार श्रीमती बागेश्वरी देवी के सानिध्य में निखारा। वर्तमान में आप पद्मभूषण पंडित राजन-साजन मिश्र से गायन कला की बारीकियों की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। संगीत में स्नातकोत्तर के. दामोदर राव आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के कलाकार हैं। गायन के अलावा तबला, हारमोनियम, ह्वाइन गिटार, नाल आदि पर भी आप अधिकार रखते हैं। आपको शबद कीर्तन, भजन, गीत एवं ग़ज़ल गायन के लिए भी जाना जाता है। सुर सिंगार संसद, मुंबई द्वारा सुरमणि पुरस्कार तथा अन्य पुरस्कारों से सम्मानित हैं। आप देश के कई प्रतिष्ठित कला मंचों पर अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन कर कला जगत में एक विशिष्ट स्थान बनाया है। आपके भजन कैसेट एवं सी. डी. जारी हुई हैं।

समित कुमार मलिक - ध्रुपद गायन

डॉ. समित कुमार मलिक दरभंगा घराने के प्रख्यात सांगीतिक परिवार की तेरहवीं पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं। आपने बहुत ही कम आयु में ध्रुपद की शिक्षा प्रसिद्ध हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत गुरु एवं पिता पंडित राम कुमार मलिक के मार्गदर्शन में प्रारम्भ की। आपको अपने पितामह विश्व प्रसिद्ध ध्रुपद सम्राट स्वर्गीय पंडित विदुर मलिक से भी संगीत की शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। संगीत में पी.एच.डी. तथा ध्रुपद गायन के आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के 'ए' श्रेणी कलाकार डॉ. समित को ध्रुपद के साथ-साथ ख्याल, ठुमरी, दादरा, भजन, विद्यापति गीत में भी दक्षता प्राप्त है। सप्तर्षि संगीत सम्मान, बिहार कला पुरस्कार तथा अन्य सम्मानों से विभूषित डॉ. समित ने देश के अनेक प्रतिष्ठित संगीत कला मंचों से ध्रुपद गायन कला का प्रदर्शन कर कला जगत में विशिष्ट स्थान बनाया है। संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार से राष्ट्रीय छात्रवृत्ति प्राप्त डॉ. सुमित ने वर्ष 2017 में दरबार म्यूज़िक फेस्टिवल, लंदन (यू.के.) में अपनी कला का जादू बिखेरा है। बिहान म्यूज़िक, कोलकाता द्वारा आपकी ध्रुपद की सी.डी. 'द कलावंत ऑफ दरभंगा' भी जारी की गयी है।

हितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव - तबला

हितेन्द्र श्रीवास्तव प्रतिभावान तबला वादक हैं। आठ वर्ष की अल्पायु से तबला वादन की शिक्षा डॉ. मुकेश सक्सेना के मार्गदर्शन में आपने प्राप्त की। वर्तमान में आप बनारस घराने के मूर्धन्य तबला वादक पंडित कुमार बोस जी से प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। संगीत स्नातक हितेन्द्र ने ख्यातिलब्ध संगीतज्ञ उस्ताद अमजद अली खान, पंडित शिव कुमार शर्मा एवं शुभा मुद्गल आदि के साथ प्रस्तुतियाँ दी हैं। राष्ट्रपति द्वारा बालश्री राष्ट्रीय पुरस्कार एवं अन्य सम्मानों से सम्मानित हितेन्द्र ने देश के विभिन्न कला मंचों तथा महत्वपूर्ण अवसरों पर अपने तबला वादन का जादू बिखेरकर विशिष्ट स्थान बनाया है। रामजस महाविद्यालय में क्वायर डॉयरेक्टर तथा साधना संगीत महाविद्यालय में तबला शिक्षक रह चुके हितेन्द्र ने कार्यशालाओं एवं संगोष्ठियों में भागीदारी की है। वर्तमान में रियाज़ रूम से ब्लॉग राइटर एवं कलाकार के रूप में जुड़े हैं।

संध्या तिवारी बापट, स्वर शृंगार संगीत संस्था - वृन्द वादन

स्वर शृंगार संगीत संस्था की शुरुआत वर्ष 2016 में आरम्भ हुई। संस्था के संस्थापक वरिष्ठ सितार वादक पंडित प्रमोद बापट के निर्देशन में शास्त्रीय वाद्यवृन्द सितार, तबला वाद्य वृन्दों को सम्मिलित कर चौदह कलाकारों के समूहों द्वारा संस्था के माध्यम से विगत कई वर्षों से कार्यक्रमों में प्रस्तुति कर रहे हैं। प्रमोद बापट शास्त्रीय संगीत के प्रति समर्पित युवा कलाकारों को संस्था के माध्यम से सतत संवर्धन व प्रोत्साहन देने के लिए समर्पित व संकल्पित हैं।

निर्देशक- पण्डित प्रमोद बापट

कलाकार : सितार- संध्या तिवारी बापट, रचना गोयल, जयश्री देव, एलिक, आकाश, धीरेन्द्र, खुशबू, राजन प्रमाणिक, मोनिश, सिद्धार्थ।

तबला- अविनाश राजावत, पवन माहोर, आशीष लव्हाटे, सलमान खान

गिटार- रिषभ ह्यारण, प्रसन्न लव्हाटे

अना तनवीर, यू.के. - विश्व संगीत

एंग्लो- आयरिश जिल मैकडोनाल्ड एवं भारत के सुप्रसिद्ध नाट्य शख्सियत स्वर्गीय हबीब तनवीर की पुत्री अना तनवीर ने डबलिन में जन्म लिया। आपने अपना बचपन आयरलैंड, स्कॉटलैंड, इंग्लैंड तथा भारत में बिताया। अना तनवीर ने डार्टिंगटन कॉलेज ऑफ आर्ट्स से शिक्षा प्राप्त की। आपने गायिकी की शिक्षा 'द रॉयल एकेडमी ऑफ म्यूज़िक', लंदन से प्राप्त की तथा सेल्टिक हार्प वादन सीखा जो कि वो सदैव गिटार के साथ अपनी प्रस्तुतियों में उपयोग करती हैं। एक प्रशिक्षित शास्त्रीय संगीत गायक कलाकार अना आयरलैंड, स्कॉटलैंड, मेडागास्कर, हिंदुस्तान एवं फ्रांस का पारंपरिक गायन तथा शास्त्रीय संगीत का प्रदर्शन करती हैं। अना को हाल में ही फ्रेंच ग्रामीण समुदाय तथा अन्य संस्कृतियों, विशेषकर भारतीय संस्कृति के बीच सांस्कृतिक तालमेल को प्रोत्साहन देने के लिए पुरस्कृत किया गया है। आपने समस्त यूरोप, भारत तथा मेडागास्कर के अनेक कला मंचों में पाँच विभिन्न भाषाओं में प्रस्तुतियाँ दी हैं।

भारती सिंह राजपूत - गायन

भारतीय शास्त्रीय संगीत में गायन-वादन की उत्कृष्ट परम्परा वाली पृष्ठभूमि, छत्तीसगढ़ में जन्मी भारती सिंह अपने भीतर विरासत की सम्पन्न एवं सहज सम्भावनाओं से भरी युवा गायिका है। आठ वर्ष की आयु से ही श्री तिलक दास महंत के सानिध्य में शास्त्रीय गायन की प्रारम्भिक शिक्षा ली। महाविद्यालयीन तथा विश्वविद्यालयीन, युवा महोत्सव आदि सांगीतिक स्पर्धाओं में इनकी महत्वपूर्ण उपस्थिति रही है। गायन-वादन के निरन्तर संवर्धन व परिमार्जन हेतु प्रयासरत भारती सिंह ने इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ से वायोलिन वादन (बेला) में बी.म्यूज की उपाधि प्राप्त की है। आपने स्वतन्त्र रूप से श्री दिगम्बर राव केलकर, श्री बसंत तिमोथी एवं आचार्य तुलसीराम देवांगन से शास्त्रीय एवं सुगम संगीत की शिक्षा प्राप्त की है। देश के विभिन्न समारोहों में आपने प्रस्तुतियाँ दी हैं। वित्त विभाग, छत्तीसगढ़ में सहायक संचालक के पद पर कार्यरत आप सुश्री मीरा राव (शिष्या बड़े गुलाम अली खाँ साहब एवं पण्डित कुमार गंधर्व) भोपाल से हिन्दुस्तानी शास्त्रीय गायन की शिक्षा प्राप्त कर रही हैं।

वर्षा अग्रवाल - संतूर

वर्षा अग्रवाल समर्पित, प्रतिभाशाली, स्थापित तथा प्रथम महिला संतूर वादिका हैं। संगीत की प्रारंभिक शिक्षा स्व. श्री इलाही बख्श एवं स्व. श्री गिरधारीलाल डांगी से प्राप्त की। उज्जैन के प्रख्यात तबला वादक पण्डित ललित महन्त से भी गायन, तबला तथा संतूर की शिक्षा प्राप्त की। पद्मश्री पण्डित भजन सोपोरी की आप शिष्या हैं। आप आकाशवाणी एवं दूरदर्शन की ए ग्रेड कलाकार हैं। आपकी ई-बुक्स 'टूली योर्स' प्रकाशित है। हाड़ोती की लोकगाथाओं की गायन परम्परा पर आपको पी.एच.डी की उपाधि प्राप्त हुई है। हरिओम ट्रस्ट अवार्ड, रिसर्च लिंक अवार्ड, कला विदूषी अवार्ड, सम्राट विक्रमादित्य सम्मान, डागर घराना सम्मान से सम्मानित डॉ. वर्षा ने देश एवं विदेश में आयोजित अनेक सांगीतिक समारोहों में शिरकत कर सफल प्रस्तुतियों से श्रोताओं को मंत्रमुग्ध किया है। आप आईसीसीआर की सूचीबद्ध कलाकार हैं।

शुभ्रा गुहा - गायन

देश की अग्रणी महिला गायिकाओं में शुमार शुभ्रा गुहा आगरा घराने का प्रतिनिधित्व करती हैं। संगीत की प्रारंभिक शिक्षा स्व. श्री सतीश भौमिक से प्राप्त की। आगरा घराने के पण्डित सुनील बोस से गहन प्रशिक्षण प्राप्त किया तत्पश्चात स्व. पण्डित के.जी. गिन्दे तथा स्व. श्री डी.टी. जोशी और विजय किचलू से भी आपको प्रशिक्षण एवं महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। ख्याल गायन के साथ ही पूरब तथा बनारस अंग के ठुमरी गायन में निपुण शुभ्रा ठुमरी, दादर, चैती, कजरी के विशाल संग्रह की धनी है। अनेक दुर्लभ रागों तथा बंदिशों को सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करने की क्षमता रखती हैं, खुले आकार, ताने तथा लययुक्त बोल बांट आपके गायन की विशेषता है। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन की ए ग्रेड कलाकार शुभ्रा ने देश एवं विदेश में आयोजित प्रतिष्ठित समारोहों में शिरकत की है। एचएमवी से एलबम, सा रे गा मा, म्युज़िक टूडे एवं विभिन्न रिकार्डिंग कम्पनियों ने आपकी गायिकी का ध्वन्यांकन किया है। पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा आपको गिरजा शंकर पुरस्कार से पुस्कृत भी किया गया हैं।

हरिकथा एवं मीलाद शरीफ़, शहनाई वादन, परम्परा

तानसेन समारोह की सांगीतिक यात्रा 9 दशक पूरे कर शताब्दी के अंतिम दशक में प्रवेश कर चुकी है। समारोह से जुड़ी अनन्यतम गतिविधि के रूप में समारोह के शुभारम्भ दिवस पर प्रातः विख्यात संगीतकार तानसेन साहब की समाधि पर हरिकथा एवं मीलाद का आयोजन किया जाता है। यह वर्षों से तानसेन समारोह की महत्वपूर्ण गतिविधि रही है। परम्परानुसार हरिकथा ढोलीबुवा महाराज द्वारा एवं मीलाद शरीफ़ मौलाना साहब द्वारा एवं शहनाई वादन की परम्परा का निर्वाहन किया जाता है।

वादी संवादी

वादी-संवादी तानसेन समारोह की नियमित गतिविधि के रूप में स्थापित है। पिछले वर्षों में संगीत की पारम्परिक सभाओं के साथ-साथ विमर्श का क्रम निरन्तरता में आयोजित किया जाता रहा है। संगीत समारोह की समग्रता में विमर्श एक अनूठी कड़ी है। इस अनुष्ठान में देश के संगीत मनीषी घराने की सांगीतिक विशिष्टताओं के साथ-साथ संगीत के विभिन्न पक्षों पर, स्वयं की संगीत साधना और अवदान से कला रसिकों को अभिभूत करते रहे हैं। यह प्रयास सफल रहा और पिछले तानसेन समारोहों में यह अनुषांगिक गतिविधि बहुत सराही भी गई है। हम आभारी हैं कि वादी-संवादी की इस महनीय यात्रा में संगीत मनीषी और सुधी रसिकजन निरन्तर सहभागी बने रहे हैं। इस वर्ष मलिका-ए-ग़ज़ल बेगम अख्तर की दास्तान पर केन्द्रित 'अख्तरी' पर विद्या शाह तथा वायोलिन और मैं पर केन्द्रित 'वायोलिन गाथा' पर अनुप्रिया देवताले बातचीत करेंगी।

27 दिसम्बर
अख़्तरी
मलिका-ए-ग़ज़ल
बेगम अख़्तर की दास्तान
विद्या शाह

28 दिसम्बर
वायोलिन गाथा
वायोलिन और मैं
अनुप्रिया देवताले

सायं 4 से 6 बजे तक

तानसेन कलावीथिका पड़ाव, ग्वालियर

पूर्वजों से प्राप्त सांस्कृतिक धरोहर की प्रदर्शनी 25 से 28 दिसम्बर, 2018

थाती

दतिया राज में संगीत विभाग था जिसे **अरबाब-ए-निसाद-बेड़ा** कहा जाता था। इस विभाग में लगभग 150 गायक-वादक थे। ये एक-से-एक आला दर्जे के गायक, पखावजी, तबला वादक एवं नर्तक थे। नृत्यकारों की समृद्ध परम्परा भी थी जो अब नहीं हैं। इस गुणीजन खाने में से किसी गायक ने **रागमाला** ग्रंथ लिखा था। इस ग्रंथ में ध्रुपद, धमार, ख्याल, तराना, होरी आदि विविध गीतों का संग्रह है। इन सभी में राग एवं ताल का उल्लेख है परन्तु स्वरलिपि नहीं है। इस ग्रंथ में पंजाबी भाषा के गीत भी दिये हैं। यह ग्रंथ बहुत पुराना एवं जर्जर स्थिति में मेरे पास सुरक्षित है। इस ग्रंथ के रचयिता या संग्रहकर्त्ता का नाम नहीं मिलता। इस ग्रंथ को कभी भी देखा जा सकता है।

सौजन्य
पण्डित सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट
`रसरंग'

तानसेन कलावीथिका पड़ाव, ग्वालियर

ललित कला प्रदर्शनी
रंग सम्भावना

विश्व संगीत समागम तानसेन समारोह में सांगीतिक प्रस्तुतियों के साथ-साथ अनुषांगिक गतिविधि रंग सम्भावना विस्तार के क्रम में पिछले कुछ वर्षों से प्रारम्भ की गई है। रंग सम्भावना ललित कला प्रदर्शनी है जिसमें सृजनरत कलाकारों की कलाकृतियों को प्रदर्शित किया जाता रहा है। सांगीतिक आयोजन में ललित कला प्रदर्शनी को कलारसिकों ने सराहा है। इस वर्ष भी रंग सम्भावना ललित कला प्रदर्शनी निःसंदेह समारोह की श्रीवृद्धि करेगी।

25 से 29 दिसम्बर 2018
दोपहर 12-6 बजे तक
शासकीय ललित कला महाविद्यालय
अचलेश्वर मंदिर के पास, ग्वालियर

प्रदर्शनी कार्यक्रम अवधि में देखी जा सकेगी

लोकार्पण

दुर्लभ बन्दिशें

त्रिवट • चतुरंग
रास • धमार

मूल प्रति
पण्डित गणपत राव गवई- ग्वालियर
स्वरलिपि, पुनर्लेखन एवं गायन
पण्डित सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग'

तानसेन समारोह

विश्व संगीत समागम
2 0 1 8

मध्यप्रदेश शासन, संस्कृति विभाग के लिए
जिला प्रशासन एवं नगर निगम ग्वालियर
के सहयोग से
उस्ताद अलाउद्दीन ख़ाँ संगीत एवं कला अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, भोपाल का प्रतिष्ठा आयोजन

स्थानीय संपर्क
तानसेन कला वीथिका- पड़ाव, ग्वालियर
0751-2372398, 0755-2553782 - uakska@yahoo.com